अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-41, अंक-24, 1-15 अगस्त, 2018

दलित-आदिवासी पर विशेष

'पूंजीपति समय रहते न चेते तो करोड़ों जाग्रत किन्तु अज्ञान और भूखे लोग देश में ऐसी गड़बड़ी मचा दें, जिसे एक बलशाली हुकूमत की फौजी ताकत भी नहीं रोक सकती।'

-गांधी

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य, अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक

वर्ष : 41, अंक : 24, 1-15 अगस्त, 2018

संपादक
अशोक मोती
फोन : 0542-2440223

संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह **भवानी शंकर 'कुसुम'**

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ, साधना केन्द्र
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	05 रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC No. UBIN-0538353
Union Bank of India
Rajghat, Varanasi

इस अंक में...

1. स्वतंत्रता दिवस का आगमन... 2
2. तिलक : वे लोकमान्य ही थे... 3
3. करो या मरो... 5
4. लोकतंत्र को बढ़ावा देने की प्रतिज्ञा... 6
5. सत्य का महसूल... 7
6. सवाल अछूत का... 10
7. किसे डर लगता है दलितों से... 12
8. दलित और आदिवासी की जीवन... 15
9. उपन्यास : 'बा'... 17
10. गतिविधियां एवं समाचार... 19
11. कविताएं... 20

संपादकीय

स्वतंत्रता दिवस का आगमन, निराशा के आंगन में

जब चमन झुलसे हो ज्वाला में, मर्सिया कोकिला गाती हो,
फिर क्यों न बहारे पलट जायें, इस ओर अगर वह आती हों।

हिन्दुस्तान तो रंग-बिरंगे फूलों का एक गुलदस्ता रहा है और यही उसकी खूबसूरती रही है जिस पर हमारे पूर्वजों—ऋषि, मुनि, विद्वानों—सबको गर्व रहा है। इस सुंदर धरती को पाने के लिए न जाने कितने आक्रमण हुए, कितने घाव दिये किन्तु इस मिट्टी की खुशबू में कभी कमी नहीं आयी।

जिस भारत देश की विविधता में एकता को गुरु रवीन्द्र ने 1910 में अपनी कविता 'भारत तीर्थ' में अपनी वाणी दी और उसी कालखंड में ही हमारे राष्ट्रगान जिसे हम राष्ट्रीय पर्वों पर गाते हैं, की रचना हुई।

'हे मेरे चित्र, पुण्य तीर्थ जागो रे धीरे
एइ भारतेर महामानवेर सागर तीरे।
एसो है आर्य, एसो अनार्य, हिन्दु-मुसलमान
एसो आज तुमि इड्गराज, एसो एसो खृष्टान।
एसो ब्राह्मण, शुचि करि मन धरोहात सबाकार-
एसो हे पतित, करो अपनीत सब अपमान भार।'

लोकमान्य तिलक से लेकर लोकनायक जयप्रकाश तक चाहे वह गांधी हों, राजेन्द्र प्रसाद हों या नेहरू हों, लोहिया और जयप्रकाश हों और न जाने कितने बड़े बुद्धिजीवी और साहित्यकार हों सबों ने 'एकता' के साथ 'समता' के महत्त्व को दर्शाया—कोई भाषा छोटी नहीं, कोई धर्म छोटा नहीं, कोई संस्कृति छोटी नहीं।

गांधी ने भारत को दुनिया का सबसे प्यारा देश कहा। सिर्फ इसलिए नहीं कि वह उनका देश है बल्कि इसलिए कि इस देश में उसकी अच्छाइयों के उन्होंने दर्शन किये थे।

गांधी ने स्पष्ट कहा—'सर्वोच्च अपेक्षाएं रखने वाले किसी व्यक्ति को अपने विकास के लिए जो कुछ चाहिए, वह सब उसे भारत में मिल सकता है। मैं यह सोचना पसंद करूंगा कि भारत अपनी अहिंसा के जरिए सारे विश्व के शांतिदूत का काम करे।'

गांधी ने कहा—'मेरे सपनों का स्वराज्य तो गरीबों का स्वराज्य होगा।' यानी गांधी के विचार प्रचलित साामाजिक और आर्थिक व्यवस्था के खिलाफ एक विकेन्द्रित अहिंसक समाज के बुनियादी विचार, अन्याय के अहिंसक प्रतिकार तथा सामाजिक परिवर्तन के क्रांतिकारी विचार थे। उनका मानना था कि सच्चे लोकतंत्र में नीचे से नीचे और ऊंचे से ऊंचे आदमी को समान अवसर मिलने चाहिए। इसलिए सच्ची लोकशाही केन्द्र में बैठे हुए दस-बीस आदमी नहीं चला सकते, वह तो नीचे से हर एक गांव के लोगों द्वारा चलायी जानी चाहिए।

गांधी भारत को सेक्युलर स्टेट देखना चाहते थे। अपनी ऊंची आवाज में दुहराया था—'कुछ लोग ऐसा कहते हैं कि भारतीय स्वराज्य तो ज्यादा संख्या वाले समाज यानी हिन्दुओं का ही राज्य होगा, लेकिन इस मान्यता से ज्यादा बड़ी कोई दूसरी गलती नहीं हो सकती। हिन्द स्वराज्य का अर्थ है—सब लोगों का राज्य, न्याय का राज्य। वह गरीबों का राज्य होगा जिसमें सभी जाति, धर्म व भाषा की जनता को बराबरी का स्थान होगा।

किन्तु 15 अगस्त 1947 की मध्य रात्रि को जो आशाओं की किरणों ने करोड़ों भारतवासियों को असीम खुशियां और आशाएं दी थी, नागरिकों को सामाजिक-आर्थिक अधिकार और आजादी दिए बगैर समानता की गारंटी दी गयी थी, वह लोकतंत्र आज संकट में है। और इसलिए स्वतंत्रता दिवस का स्वागत हम एक निराशाभरे आंगन में कर रहे हैं। अराजकता की यह पराकाष्ठा है कि सत्ताधारी संवैधानिक व्यक्ति, बुद्धिजीवियों और सेक्युलरों को गोली मार देने की बात करते हैं। नरेन्द्र दाभोलकर, गोविन्द पानसारे, एम. एम. कुलबुर्गी और गौरी लंकेश जैसे बुद्धिजीवी मारे जा चुके हैं। दलित, मुसलमान और महिलाओं पर लगातार किसी न किसी बहाने हमले हो रहे हैं। किसान स्वयं आत्महत्या पर उतारू है। नवउदारवादी व्यवस्था की हामी भरती कांग्रेस और भाजपा दोनों की सरकारों ने बाजारोन्मुखी विकास का आधार बनाया, जिस कारण आदिवासियों को जल-जंगल और जमीन से खदेड़ा जा रहा है। लोगों को अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक की भाषा सीखायी जा रही है। देश के सर्वोच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश प्रधानमंत्री की उपस्थिति में आंसू भर रोता है। यानी धर्मनिरपेक्षता पर ऐसा प्रहार और बहुसंख्यावाद का ऐसा उभार आजादी के बाद गांधी की हत्या के अतिरिक्त कभी देखने को नहीं मिला। विभिन्न अवसरों पर सत्ताधारी दल के बड़बोलों ने जैसे वक्तव्य दिये हैं और जैसा हर जगह हिंसा का बीज बो रहे हैं वे इस अराजकता के पीछे कार्यरत तत्त्वों का चेहरा स्पष्ट करते हैं।

ऐसे निराशापूर्ण वेला में स्वतंत्रता दिवस का आगमन हुआ है, लोकतंत्र संकट में है उसे संकट से कैसी भी कुर्बानी देकर बाहर निकालने का सत्य और अहिंसा में विश्वास रखने वालों को संकल्प लेना चाहिए।

अहिंसक क्रांति के विकास में जिस तरह गांधी और गांधी के बाद विनोबा और फिर जयप्रकाश ने लोकतंत्र की रक्षा कर प्रतिकार की पद्धति बतलायी, उसे हम अपना सकते हैं।

देश की जनता और सत्ता दोनों को गांधी की चेतावनी याद रखनी चाहिए—'पूंजीपति समय रहते न चेते तो करोड़ों जाग्रत किन्तु अज्ञान और भूखे लोग देश में ऐसी गड़बड़ी मचा दें, जिसे एक बलशाली हुकूमत की फौजी ताकत भी नहीं रोक सकती।'

गांधी ने हालांकि यह आशा रखी थी कि भारत वर्ष इस विपत्ति से बचने में सफल रहेगा।

–अशोक मोती

1 अगस्त : तिलक पुण्य-तिथि

तिलक : वे लोकमान्य ही थे

❑ महात्मा गांधी

उनको गये तब नौ बरस हो गये थे। गांधीजी अपनी ही संस्था में, अपने ही लोगों, छात्रों के बीच तिलक महाराज की नौवीं पुण्यतिथि पर भाषण दे रहे हैं। भाषण के प्रारंभ में ही उनसे सवाल पूछा गया है कि 'शठं प्रति शाठ्यम्' को तिलक का सिद्धांत माना जाता है। गांधीजी का भाषण ठेठ इसी प्रश्न से शुरू होता है। वे इसका उत्तर देते हुए लोकमान्य की विनोदी वृत्ति का बखान करते हैं और इस गंभीर प्रश्न का उत्तर अपनी भी विनोद वृत्ति से बड़ी सहजता के साथ देते हैं। पहली अगस्त 2018 को लोकमान्य तिलक की तिरान्नवीं पुण्यतिथि है। इस मौके पर गांधीजी का यह भाषण इस बात का सुंदर उदाहरण प्रस्तुत करता है कि समकालीन विभूतियों का स्मरण कैसे किया जाना चाहिए। लोकमान्य से लोकनायक तक! –संपा.

आपका यही सवाल है न कि लोग 'शठं प्रति शाठ्यम्' को तिलक महाराज का सिद्धांत मानते हैं, तो हमें उनके जीवन में इस सिद्धांत की प्रतीति कहां तक होती है?

हमें इस प्रश्न की छानबीन से बहुत-कुछ नहीं मिल सकता। इस बारे में तिलक महाराज के साथ मेरा थोड़ा-बहुत पत्र-व्यवहार अवश्य हुआ था। उनके जीवन में नम्र विद्यार्थी और गुणों के एक पुजारी के नाते मैं कह सकता हूं कि तिलक महाराज में विनोद की शक्ति थी। विनोद के लिए अंग्रेजी में 'ह्यूमर' शब्द है। अब तक हम इस अर्थ में 'विनोद' का उपयोग नहीं करते, इसी से अंग्रेजी शब्द लेकर अर्थ स्पष्ट करने की जरूरत पड़ी। वे राष्ट्र का इतना बोझ उठाते थे कि अगर उनमें यह विनोद-शक्ति न होती तो वे पागल हो जाते। अपनी विनोद प्रियता के कारण वे स्वयं अपनी रक्षा तो कर ही लेते थे, दूसरों को भी विषम स्थिति में से बचा लेते थे। दूसरे, मैंने यह देखा है कि वाद-विवाद करते समय वे कभी-कभी जान-बूझकर अतिशयोक्ति से भी काम ले लेते थे।

प्रस्तुत प्रश्न के संबंध में मेरा उनका जो पत्र-व्यवहार हुआ था, वह मुझे ठीक-ठीक याद नहीं है; आप लोग उसे देख जायें। 'शठं प्रति शाठ्यम्' तिलक महाराज का जीवन-मंत्र नहीं था; अगर ऐसा होता तो वे इतनी लोकप्रियता प्राप्त न कर पाते। मेरी समझ में, संसार-भर में ऐसा एक भी उदाहरण नहीं है, जिसमें किसी भी मनुष्य ने इस सिद्धांत पर अपने जीवन का निर्माण किया हो, और फिर भी वह लोकमान्य बन सका हो। यह सच है कि इस बारे में मैं जितनी गहराई से सोचता हूं, वे उस पर उतनी बारीकी से ध्यान नहीं देते थे—हम शठ के प्रति शाठ्य का कदापि उपयोग कर ही नहीं सकते।

'गीता रहस्य' में एक-दो स्थानों में, सिर्फ एक ही दो स्थानों में, इस बात का थोड़ा समर्थन मिलता जरूर है। लोकमान्य मानते थे कि राष्ट्रहित के लिए अगर कभी शाठ्य से—दूसरे शब्दों में, 'जैसे को तैसा' के सिद्धांत से काम लेना पड़े तो ले सकते हैं। साथ ही वे यह भी अवश्य मानते थे कि शठ के सामने भी सत्य का प्रयोग करना अच्छा है, यही सत्य-सिद्धांत है; मगर इस संबंध में वे कहते थे कि साधु लोग ही इस सिद्धांत पर अमल कर सकते हैं। तिलक महाराज की व्याख्या के अनुसार साधु लोगों का अर्थ वैरागी नहीं, बल्कि उन लोगों से होता है जो दुनिया से अलिप्त रहते हैं; जो दुनियादारी के कामों में भाग नहीं लेते। इससे यह अर्थ नहीं निकलता कि अगर कोई दुनिया में रहकर इस सिद्धांत का पालन करे तो वह अनुचित होगा—वह न कर सके तो यह दूसरी बात होगी; और वे मानते थे कि उस हालत में शाठ्य का उपयोग करने का उसे अधिकार है।

लेकिन अगर ऐसे महान पुरुष के जीवन का मूल्य आंकने का हमें कोई अधिकार हो, तो हम उसका मूल्य विवादास्पद बातों के आधार पर न ठहराएं। लोकमान्य का जीवन भारत के लिए, समस्त विश्व के लिए एक बहुमूल्य विरासत है। उसकी पूरी कीमत तो भविष्य ही निश्चित करेगा। इतिहास ही उसकी कीमत का अंदाजा लगायेगा; वही लगा सकता है। जीवित मनुष्य का ठीक-ठीक मूल्य, उसका सच्चा महत्त्व, उसके समकालीन कभी निश्चित कर ही नहीं सकते। उनसे कुछ न कुछ पक्षपात तो हो ही जाता है, क्योंकि इस काम के कर्त्ता भी रागद्वेषपूर्ण लोग ही होते हैं। सच पूछा जाये तो इतिहासकार भी राग-द्वेष-रहित नहीं पाये जाते। गिबन प्रामाणिक इतिहासकार माना जाता है; मगर मुझे तो पन्ने-पन्ने पर उसके पक्षपात का अनुभव होता रहता है। मनुष्य विशेष या संस्था विशेष के प्रति राग अथवा द्वेष से प्रेरित होकर उसने बहुतेरी बातें लिखी होंगी। समकालीन व्यक्ति के मन में विशेष पक्षपात होना संभव रहता है। लोकमान्य के महान जीवन का उपयोग तो यह है कि हम

सदा उनके जीवन के शाश्वत सिद्धांतों का स्मरण और अनुकरण करें।

तिलक महाराज का देशप्रेम अटल था। साथ ही उनमें तीक्ष्ण न्यायवृत्ति भी थी। इस गुण का परिचय मुझे अनायास ही मिल गया था। सन् 1917 की कलकत्ता महासभा के दिनों में हिन्दी साहित्य सम्मेलन की सभा में भी वे आये थे। महासभा के काम से उन्हें फुरसत तो कैसे हो सकती थी। फिर भी वे आये और भाषण करके चले गये। मैंने वहीं देखा कि राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति उनमें कितना प्रेम था। मगर इससे भी बढ़कर जो बात मैंने उनमें देखी, वह थी अंग्रेजों के प्रति उनकी न्यायवृत्ति। उन्होंने अपना भाषण ही यों शुरू किया था : ''मैं अंग्रेजी शासन की खूब निन्दा करता हूं, फिर भी अंग्रेज विद्वानों ने हमारी भाषा की जो सेवा की है, उसे हम भुला नहीं सकते।'' उनका आधा भाषण इसी भावना से भरा था और अंत में उन्होंने कहा था कि अगर हमें राष्ट्रभाषा के क्षेत्र में काम करना और उसको उन्नत करना हो तो हमें भी अंग्रेज विद्वानों की भांति ही परिश्रम और अध्ययन करना चाहिए। उन्होंने कहा था कि हमारी लिपि की रक्षा और हमारे व्याकरण की व्यवस्था के लिए हमें एक बड़ी हद तक अंग्रेज विद्वानों की भांति ही परिश्रम और अध्ययन करना चाहिए। उन्होंने कहा था कि हमारी लिपि की रक्षा और हमारे व्याकरण की व्यवस्था के लिए हम एक बड़ी हद तक अंग्रेज विद्वानों के आभारी हैं। जो पादरी आरंभ में आये थे, उनमें दूसरों की भाषा के लिए प्रेम था। गुजराती में टेलर-कृत व्याकरण कोई साधारण वस्तु नहीं है। लोकमान्य ने तब इस बात का विचार नहीं किया था कि अंग्रेजों की स्तुति करने से मेरी लोकप्रियता घटेगी। लोगों का तो यही विश्वास था कि वे अंग्रेजों की केवल निन्दा ही कर सकते हैं।

तिलक महाराज में जो त्यागवृत्ति थी, उसका सौवां या हजारवां भाग भी हम अपने में नहीं बता सकते। और उनकी सादगी? उनके कमरे में न तो किसी तरह का फर्नीचर होता था, न कोई खास सजावट। अपरिचित आदमी तो सोच भी नहीं सकता था कि यह किसी बड़े आदमी का निवास स्थान है। रग-रग में भिदी हुई उनकी इस सादगी का हम अनुसरण करें तो कैसा हो? उनका धैर्य तो अद्‌भुत था ही। अपने कर्तव्य में वे सदा अटल रहते थे और उसे कभी भूलते ही न थे। धर्म-पत्नी की मृत्यु का संवाद पाने पर भी उनकी कलम चलती ही रही।

हम एक ओर तो खूब आनंद भोगते रहना चाहते हैं, और दूसरी ओर स्वराज्य भी लेना चाहते हैं। ये दोनों बातें परस्पर-विरोधी हैं। इन दिनों देश में पाखंड, स्वच्छंदता और स्वेच्छाचार का बाजार गर्म है। अगर हम स्वराज्य लेना चाहते हों तो स्वराज्य ही हमारा ध्यान-मंत्र होना चाहिए। स्वेच्छाचार कदापि नहीं। क्या हम तिलक महाराज के जीवन के भोग-विलास में बीते एक भी क्षण पर अंगुली रख सकते हैं? उनमें जबर्दस्त सहिष्णुता थी। यानी वे चाहे जितने उद्दंड आदमी से भी काम करवा लेते थे। लोकनायक में यह शक्ति होनी चाहिए। इससे कोई हानि नहीं होती। अगर हम संकुचित हृदय के बन जायें और सोच लें कि फलां आदमी से काम लेंगे ही नहीं, तो या तो हमें जंगल में जाकर बस जाना चाहिए या घर बैठकर गृहस्थ का जीवन बिताना चाहिए, और इसमें भी शर्त यही है कि हम खुद अलिप्त रह सकें।

मुंह से तिलक महाराज का बखान करके ही हम अपने कर्तव्य की इति न मान बैठें। काम, काम और काम ही हमारा जीवन-सूत्र होना चाहिए। हम स्वराज्य-यज्ञ को चालू रखना चाहते हैं तो हम निकम्मे साहित्य का पढ़ना बंद कर दें, निरर्थक बातें करना छोड़ दें और अपने जीवन का एक-एक क्षण स्वराज्य के काम में बिताने लगें। आप पूछेंगे कि क्या पढ़ाई छोड़कर यह काम करें? सन् 1921 में भी विद्यार्थियों के साथ यही लेकर मुझे विवाद करना पड़ता था।

तिलक महाराज ने क्या किया था? उन्होंने जो बड़े-बड़े ग्रंथ लिखे, वे बाहर रहकर नहीं, जेल में लिखे थे। 'गीता रहस्य' और 'आर्क्टिक होम' वे जेल में ही लिख पाये थे। बड़े-बड़े मौलिक ग्रंथ लिखने की शक्ति होते हुए भी उन्होंने देश के लिए उसका बलिदान किया था। उन्होंने सोचा : ''घर के चारों ओर आग भभक उठी है, इसे जितनी बुझा सकूं, उतनी जल्दी बुझाऊं।'' उन्होंने अगर हजार घड़े पानी उस पर डाला तो हम एक ही घड़ा डालें; मगर डालें तो सही। पढ़ाई आदि आवश्यक होते हुए भी गौण बातें हैं। अगर स्वराज्य के लिए इनका उपयोग होता हो तो करना चाहिए, अन्यथा इन्हें तिलांजलि दे देनी चाहिए। इससे न हमारा नुकसान होगा न संसार का।

तिलक महाराज अपने जीवन द्वारा इसका प्रत्यक्ष उदाहरण छोड़ गये हैं। जिनके जीवन में से इतनी सारी बातें ग्रहण करने योग्य हों; जिनकी विरासत इतनी जबर्दस्त हो, उनके संबंध में उक्त प्रश्न को लेकर बैठे रहने की गुंजाइश ही नहीं रहती। हमारा धर्म तो गुणग्राही बनने का है।

आज हमें जो काम करना है, वह मुर्दार आदमियों के किये हो नहीं सकता। स्वराज्य का काम कठिन है। भारत में आज एक लहर बह रही है; उसमें खिंचकर हम भाषण करते हैं; उपद्रव मचाते हैं, तूफान खड़े करते हैं, चाहे जिस ढंग से संस्था में घुस जाते हैं और फिर उन्हें नष्ट करते हैं और धारासभाओं में जाकर भाषण करते हैं। तिलक महाराज के जीवन में ये बातें हमारे देखने में भी नहीं आतीं।

उनके जीवन के जो गुण अनुकरणीय हैं, सो तो मैं ऊपर कह ही चुका हूं। मगर आप इतना करेंगे तो आपका इस राष्ट्रीय विद्यपीठ में रहकर अध्ययन करना सार्थक होगा, अन्यथा आप पर जो खर्च हो रहा है, वह व्यर्थ जायेगा। अगर हम कर्तव्य-कर्म न करें तो इन भाषणों और पाठ्यक्रम के निबंध-वाचन आदि के होते हुए हम जहां थे, वहीं बने रहेंगे और आज के उत्सव में जो दो घंटे बीते हैं, वे भी निरर्थक सिद्ध होंगे। मुझे आशा है, ऐसा न होगा। ❑

(2 अगस्त, 1929 को गुजरात विद्यपीठ, अहमदाबाद में दिया गया भाषण)

9 अगस्त क्रांति दिवस

करो या मरो

❑ गांधी

दोस्तो, मेरा विश्वास करो, मैं मरने के लिए कतई उत्सुक नहीं हूं। मैं अपनी पूरी आयु जीना चाहता हूं। मेरे विचारानुसार वह आयु कम-से-कम 120 वर्ष है। उस समय तक भारत स्वतंत्र हो जायेगा, संसार स्वतंत्र हो जायेगा। मैं आपको यह भी बता दूं कि मैं इंग्लैंड को अथवा इस दृष्टि से अमेरिका को भी स्वतंत्र देश नहीं मानता। ये अपने ढंग से स्वतंत्र देश हैं, पृथ्वी की अश्वेत जातियों को दासता के पाश में बांधे रखने के लिए स्वतंत्र हैं। क्या इंग्लैंड और अमेरिका आज इन जातियों की स्वतंत्रता के लिए लड़ रहे हैं? आप स्वतंत्रता की मेरी परिकल्पना को सीमित न करें। अंग्रेज और अमेरिकी शिक्षकों ने, उनके इतिहास ने, उनके शानदार काव्य ने यह नहीं कहा है कि आप स्वतंत्रता की व्याख्या का विस्तार न करें। मुझे विवश होकर कहना पड़ रहा है कि स्वतंत्रता की मेरी व्याख्या के अनुसार, वे उनके कवियों और शिक्षकों ने जिस स्वतंत्रता का वर्णन किया है उससे सर्वथा अपरिचित हैं। यदि वे सच्ची स्वतंत्रता को जानना चाहते हैं तो उन्हें भारत आना चाहिए। उन्हें यहां अभिमान और अहंकार-भाव से नहीं बल्कि सच्चे सत्यान्वेषी की भावना से आना होगा।

यह वह मूलभूत सत्य है, जिसका पिछले 22 वर्षों से भारत प्रयोग कर रहा है। बहुत पहले, अपने स्थापना-काल से ही कांग्रेस अनजाने ही उस चीज का त्याग करके चलती रही है जिसे संवैधानिक तरीका कहा जाता है, हालांकि ऐसा करते हुए भी वह अहिंसा पर कायम रही है। दादाभाई और फिरोजशाह, जो कांग्रेसी भारत के सर्वेसर्वा थे, संवैधानिक तरीके पर आरूढ़ रहे। वे कांग्रेस के प्रेमी थी। वे इसके मालिक थे। लेकिन सबसे पहले वे सच्चे सेवक थे। उन्होंने हत्या, गोपनीयता और ऐसी अन्य बातों का कभी समर्थन नहीं किया। मैं यह स्वीकार करता हूं कि हम कांग्रेसियों में कई खराब लोग हैं। लेकिन बड़े-से-बड़े पैमाने पर अहिंसात्मक संघर्ष छेड़ने के लिए मैं सारे भारत पर भरोसा करता हूं। मानव-स्वभाव की नैसर्गिक अच्छाई पर मुझे भरोसा है, जो सत्य को जान लेता है और संकट के समय मानो अंतःप्रेरणा से काम करता है। लेकिन यदि अपने इस विश्वास में मैं ठगा जाता हूं तो भी मैं विचलित नहीं होऊंगा। अपने स्थापना काल से ही कांग्रेस ने अपनी नीति का आधार शांतिपूर्ण तरीकों को बनाया तथा बाद में आने वाली पीढ़ियों में उनमें असहयोग और जोड़ दिया। जब दादाभाई ने ब्रिटिश संसद में प्रवेश किया तो सेलिसबरी ने उन्हें काले आदमी का खिताब दिया था। लेकिन अंग्रेज जनता ने सेलिसबरी को हरा दिया और दादाभाई उसी के मतों से संसद में पहुंचे। भारत तब हर्ष से पागल हो उठा था। तथापि इन सब बातों को भारत अब पीछे छोड़ आया है।

मैं चाहता हूं कि अंग्रेज, यूरोपीय और सभी मित्र राष्ट्र इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए अपने दिलों से पूछें कि आज भारत ने अपनी स्वतंत्रता की जो मांग की है उसमें उसने क्या अपराध किया है। मैं पूछता हूं : क्या आपका हम पर अविश्वास करना उचित है? क्या यह उचित है कि जिस संस्था की ऐसी पृष्ठभूमि है, आधी सदी से अधिक काल की ऐसी परंपरा और ऐसा इतिहास है, उस पर अविश्वास किया जाये और अपनी पूरी शक्ति लगाकर आप संसार के समक्ष उसकी गलत तस्वीर पेश करें? मैं पूछता हूं कि क्या यह उचित है कि आप येन-केन प्रकारेण, विदेशी समाचार पत्रों की सहायता से, अमेरिका के राष्ट्रपति की मदद से अथवा चीन के जनरलिसिमों की मदद से, जिन्हें स्वयं अभी सफलता प्राप्त करनी है, भारत की नीति विकृत रूप में पेश करें?

...यदि मेरी आंखें बंद हो जाती हैं और भारत को स्वाधीनता नहीं मिलती, तब भी अहिंसा का अंत नहीं होगा।

...आज यहां विदेशी समाचार-पत्रों के प्रतिनिध इकट्ठे हुए हैं। इनकी प्रार्थना मैं संसार से कहना चाहता हूं कि मित्र राष्ट्रों के सामने, जो कहते हैं कि उन्हें भारत की जरूरत है, आज यह सुअवसर है कि वे भारत को स्वतंत्र घोषित कर दें और इस तरह अपनी सदाशयता सिद्ध करें। यदि वे ऐसा नहीं करते तो वे अपने जीवन में मिले इस सुअवसर को खो देंगे और इतिहास के पृष्ठों में यह बात सदा के लिए अंकित हो जायेगी कि उन्होंने समय पर भारत के प्रति अपने दायित्व का पालन नहीं किया और लड़ाई हार गये। मैं समस्त संसार की शुभकामनाएं चाहता हूं, जिससे कि उनके साथ अपने प्रयास में मैं सफलता हासिल कर सकूं। मैं नहीं चाहता कि मित्र राष्ट्र अपनी स्पष्ट मर्यादाओं से बाहर जायं। मैं नहीं चाहता कि वे अहिंसा को स्वीकार करके अभी निरस्त्र हो जायें। फासीवाद में और आज मैं जिस साम्राज्यवाद के विरुद्ध लड़ रहा हूं उसमें मौलिक अंतर है।

यदि आपलोग, जिनके पास मदद करने की ताकत है, अपनी उस ताकत का

प्रयोग नहीं करते तो उस स्वतंत्रता का कोई आनंद नहीं रह जायेगा। यदि आप उस ताकत का प्रयोग कर सकें तो आज जो असंभव लगता है, वह कल स्वतंत्रता की अरुणिमा में संभव हो जायेगा। यदि भारत उस स्वतंत्रता को अनुभव करने लगता है तो वह चीन के लिए उस स्वतंत्रता की मांग करेगा। रूस की मदद को दौड़ पड़ने के लिए रास्ता खुल जायेगा। अंग्रेजों ने मलाया अथवा बर्मा की भूमि पर अपने प्राण नहीं दिये हैं। हम इस स्थिति में कैसे सुधार ला सकेंगे? मैं कहां जाऊंगा और भारत की इस चालीस करोड़ जनता को कहां ले जाऊंगा? मानवता के इस विशाल सागर को संसार की मुक्ति के कार्य की ओर तब तक कैसे प्रेरित किया जा सकता है जब तक कि उसे स्वयं स्वतंत्रता की अनुभूति नहीं हो जाती? आज उसमें जीवन का कोई चिह्न शेष नहीं है। उसके जीवन के रस को निचोड़ लिया गया है। यदि उसकी आंखों की चमक को वापस लाना है तो स्वतंत्रता को कल नहीं बल्कि आज ही आना होगा। इसलिए मैंने कांग्रेस को यह शपथ दिलवाई है और कांग्रेस ने यह शपथ ली है कि वह करेगी या मरेगी।

(8 अगस्त 1942 को बम्बई में दिया गया भाषण का अंश) ❑

'सर्वोदय जगत' के सभी सुहृद पाठकों, शुभचिन्तकों, लेखकों को सर्व सेवा संघ, प्रकाशन विभाग एवं सर्वोदय जगत परिवार की ओर से 15 अगस्त 'स्वतंत्रता दिवस' की हार्दिक बधाई एवं शुभकामना! –सं.

15 अगस्त : स्वतंत्रता दिवस

लोकतंत्र को बढ़ावा देने की प्रतिज्ञा लीजिए

❑ **पं. जवाहरलाल नेहरू**

हमने नियति को मिलने का एक वचन दिय था, और अब समय आ गया है कि हम अपने वचन को निभाएं, पूरी तरह ना सही, लेकिन बहुत हद तक। आज रात बारह बजे, जब सारी दुनिया सो रही होगी, भारत जीवन और स्वतंत्रता की नयी सुबह के साथ उठेगा। एक ऐसा क्षण जो इतिहास में बहुत ही कम आता है, जब हम पुराने को छोड़ नये की तरफ जाते हैं, जब एक युग का अंत होता है, और जब वर्षों से शोषित एक देश की आत्मा, अपनी बात कह सकती है। ये एक संयोग है कि इस पवित्र मौके पर हम समर्पण के साथ खुद को भारत और उसकी जनता की सेवा, और उससे भी बढ़कर सारी मानवता की सेवा करने के लिए प्रतिज्ञा ले रहे हैं।

इतिहास के आरंभ के साथ ही भारत ने अपनी अंतहीन खोज प्रारंभ की, और ना जाने कितनी ही सदियां इसकी भव्य सफलताओं और असफलताओं से भरी हुई हैं। चाहे अच्छा वक्त हो या बुरा, भारत ने कभी इस खोज से अपनी दृष्टि नहीं हटाई और कभी भी अपने उन आदर्शों को नहीं भूला जिसने इसे शक्ति दी। आज हम दुर्भाग्य के एक युग का अंत कर रहे हैं और भारत पुनः खुद को खोज पा रहा है। आज हम जिस उपलब्धि का उत्सव मना रहे हैं, वो महज एक कदम है, नये अवसरों के खुलने का, इससे भी बड़ी विजय और उपलब्धियां हमारी प्रतीक्षा कर रही हैं। क्या हममें इतनी शक्ति और बुद्धिमत्ता है कि हम इस अवसर को समझें और भविष्य की चुनौतियों को स्वीकार करें?

भविष्य में हमें विश्राम करना या चैन से नहीं बैठना है बल्कि निरंतर प्रयास करना है ताकि हम जो वचन बार-बार दोहराते हैं, और जिसे हम आज भी दोहरायेंगे उसे पूरा कर सकें। भारत की सेवा का अर्थ है लाखों-करोड़ों पीड़ित लोगों की सेवा करना। इसका मतलब है गरीबी और अज्ञानता को मिटाना, बीमारियों और अवसर की असमानता को मिटाना। हमारी पीढ़ी के सबसे महान व्यक्ति की यही महत्त्वाकांक्षा रही है कि हर एक आंख से आंसू मिट जाएं। शायद ये हमारे लिए संभव न हो पर जब तक लोगों की आंखों में आंसू हैं और वे पीड़ित हैं तब तक हमारा काम खत्म नहीं होगा।

और इसलिए हमें परिश्रम करना होगा, और कठिन परिश्रम करना होगा ताकि हम अपने सपनों को साकार कर सकें। वो सपने भारत के लिए हैं, पर साथ ही वे पूरे विश्व के लिए भी हैं, आज कोई खुद को बिलकुल अलग नहीं सोच सकता क्योंकि सभी राष्ट्र और लोग एक-दूसरे से बड़ी समीपता से जुड़े हुए हैं। शांति को अविभाज्य कहा गया है, इसी तरह से स्वतंत्रता भी अविभाज्य है, समृद्धि भी और विनाश भी, अब इस दुनिया को छोटे-छोटे हिस्सों में नहीं बांटा जा सकता है। हमें स्वतंत्र भारत का महान निर्माण करना है जहां उसके सारे बच्चे रह सकें।

आज नियत समय आ गया है, एक ऐसा दिन जिसे नियति ने तय किया था— और एक बार फिर वर्षों के संघर्ष के बाद, भारत जागृत और स्वतंत्र खड़ा है। कुछ हद तक अभी भी हमारा भूत हमसे चिपका हुआ है, और हम अक्सर जो वचन लेते रहे हैं उसे निभाने से पहले बहुत कुछ करना है। पर फिर भी निर्णायक बिन्दु अतीत हो चुका→

सत्य का महसूल

❑ हजारी प्रसाद द्विवेदी

गुरु रवीन्द्रनाथ ठाकुर और हजारी प्रसाद द्विवेदी अपूर्व कलाकार! दोनों शांति निकेतन जैसी स्वप्नभूमि के कारीगर थे। आज से कोई 75 साल पहले, एक खास प्रसंग में दोनों आमने-सामने हुए तो यह लेख बना, जो पता नहीं कितने ही सत्यों से हमें रू-ब-रू कराता है और हमसे सत्य का महसूल वसूलता है। यह संयोग ही है कि कविगुरु (7 अगस्त) और महान साहित्यकार हजारी प्रसाद द्विवेदी जी (19 अगस्त) दोनों की जयंती अगस्त माह में ही है। दोनों महापुरुषों को श्रद्धांजलि के रूप में यह महत्त्वपूर्ण आलेख प्रस्तुत है। –सं.

ग्यारह वर्षों तक लगातार रवीन्द्रनाथ जैसे महापुरुष के संसर्ग में रहना सौभाग्य की बात ही कही जायेगी। मुझे यह सौभाग्य मिला था। जानकर और अनजान में मैंने उनसे कितना लिया है, इसका कुछ हिसाब नहीं है, किन्तु जब सोच कर कोई संस्मरण लिखने का अवसर आता है तो कुछ भी स्पष्ट याद नहीं आता। केवल एक ही बात रह-रहकर मस्तिष्क को छाप लेते है—उनका सहज प्रसन्न मुखमंडल, स्नेहमेदुर बड़ी-बड़ी आंखें और अनन्य-साधारण मंद-हास्य! मुश्किल से दो-चार अवसर ऐसे आये होंगे जब उनके मत के विरुद्ध कहना पड़ा हो और उन्होंने स्नेहपूर्वक झिड़ककर मेरी गलती दिखा दी हो। ये दो-चार अवसर कुछ स्पष्ट याद हैं, क्योंकि इन अवसरों पर मानस-पटल से उनके व्यक्तित्व का प्रभाव शिथिल हो गया होता था और झटका खाने के कारण वह सचेत हो गया होता था। एक ऐसे ही अवसर की बात आज याद आ रही है।

गुरुदेव ने (हम लोग उन्हें इसी नाम से जानते थे) एक पुस्तक लिखी थी बांगला भाषा के व्याकरण के संबंध में। कम लोग ही जानते होंगे कि उन्हें भाषाशास्त्र, व्याकरण-शास्त्र और कोष ग्रंथों के अध्ययन में बड़ा रस मिलता था। केलॉग का हिन्दी व्याकरण और हॉर्नेल का गौड़ीय व्याकरण उन्हें हस्तामलक के समान थे। विश्व भारती ग्रंथागार में इन पुस्तकों की जो प्रतियां सुरक्षित हैं उन पर उनके हाथ के लिखे नोट हैं। जिस समय की बात कह रहा हूं उस समय गर्मी की छुट्टियां चल रही थीं। आश्रम में बहुत कम लोग रह गये थे। उस वर्ष मैं भी बाहर नहीं गया था। पुस्तक की पांडुलिपि समाप्त करके गुरुदेव ने मुझे देखने को दी थी। उस पुस्तक में कई हिन्दी शब्दों और प्रत्ययों के साथ बंगला शब्दों और प्रत्ययों की तुलना की गयी थी। गुरुदेव की आज्ञा थी कि मैं उन शब्दों को अच्छी तरह देख लूं और अपनी राय निःसंकोच उनको बता दूं। मैंने पुस्तक ध्यान से पढ़ी थी और उसके दो-एक शब्दों के हिन्दी-रूप में मुझे संदेह हुआ था, यह बात मैंने नम्रतापूर्वक निवेदन कर दी थी। गुरुदेव ने प्रेमपूर्वक और आग्रह के साथ मेरी बात सुनी, शब्दों पर निशान बना लिया, उस दिन उनके बारे में विशेष कुछ बात नहीं हुई।

दूसरे दिन आकाश बादलों से भर गया। दिगंत के इस छोर से उस छोर तक काले मसृण मेघों से अंतरिक्ष आच्छादित हो गया। धारासार वर्षा हुई, साथ ही प्रचंड आंधी भी! मेघ और आंधी के सम्मिलित घूत्कार से दिङ्मंडल प्रकंपित हो उठा।

→है, और हमारे लिए एक नया इतिहास आरंभ हो चुका है, एक ऐसा इतिहास जिसे हम गढ़ेंगे और जिसके बारे में और लोग लिखेंगे।

ये हमारे लिए एक सौभाग्य का क्षण है, एक नये तारे का उदय हुआ है, पूरब में स्वतंत्रता का सितारा। एक नयी आशा कभी धूमिल न हो! हम सदा इस स्वतंत्रता में आनंदित रहे।

भविष्य हमें बुला रहा है। हमें किधर जाना चाहिए और हमारे क्या प्रयास होने चाहिए, जिससे हम आम आदमी, किसानों और कामगारों के लिए स्वतंत्रता और अवसर ला सकें, हम गरीबी, अज्ञानता और बीमारियों से लड़ सकें, हम एक समृद्ध, लोकतांत्रिक और प्रगतिशील देश का निर्माण कर सकें, और हम ऐसी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक संस्थाओं की स्थापना कर सकें जो हर एक आदमी-औरत के लिए जीवन की परिपूर्णता और न्याय सुनिश्चित कर सके?

हमें कठिन परिश्रम करना होगा। हममें से कोई भी तब तक चैन से नहीं बैठ सकता है जब तक हम अपने वचन को पूरी तरह निभा नहीं देते, जब तक हम भारत के सभी लोगों को उस गंतव्य तक नहीं पहुंचा देते जहां भाग्य उन्हें पहुंचाना चाहता है।

हम सभी एक महान देश के नागरिक हैं, जो तीव्र विकास की कगार पर है, और हमें उस उच्च स्तर को पाना होगा। हम सभी चाहें जिस धर्म के हों, समानरूप से भारत मां की संतान हैं, और हम सभी के बराबर अधिकार और दायित्व हैं। हम और संकीर्ण सोच को बढ़ावा नहीं दे सकते, क्योंकि कोई भी देश तब तक महान नहीं बन सकता जब तक उसके लोगों की सोच या कर्म संकीर्ण हैं।

विश्व के देशों और लोगों को शुभ-कामनाएं भेजिए और उनके साथ मिलकर शांति, स्वतंत्रता और लोकतंत्र को बढ़ावा देने की प्रतिज्ञा लीजिए। और हम अपनी प्यारी मातृभूमि, प्राचीन, शाश्वत और निरंतर नवीन भारत को श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं और एकजुट होकर नये सिरे से इसकी सेवा करते हैं। ❑

क्लेशकर ऊष्मा के बाद यह वृष्टि यद्यपि काफी सुहावनी मालूम होती थी पर उसने पेड़-पौधों और कच्चे मकानों को बहुत नुकसान पहुंचाया। मैं खिड़की-दरवाजे बंद करके चुपचाप बैठा हुआ था। वृष्टि अब भी हो रही थी पर आंधी का वेग शांत हो गया था। मेरे द्वार पर आघात करते हुए किसी ने आवाज दी, 'पंडितजी'! दरवाजा खोलता हूं तो सामने महादेव खड़ा है। इस समय घर से बाहर निकलने का साहस और किसे हो सकता था! महादेव गुरुदेव का सेवक है। उसके लिए कोई कार्य असाध्य नहीं। हुक्म मिलने की देर होती और महादेव काम करके हाजिर! किसी को बुलाने गया, महादेव तब तक नहीं लौट सकता जब तक वह व्यक्ति सशरीर उपस्थित न हो जाये। महादेव गुरुदेव की आज्ञा लेकर वर्षा के कुछ पूर्व रवाना हुआ था, परंतु वृष्टि और आंधी इतनी तेज थी कि उसे भी कहीं रुक जाना पड़ा। सो, काफी देर हो जाने के कारण उसकी व्याकुलता और भी बढ़ गयी थी। बिना किसी भूमिका के उसने कहा—''गुरुदेव बाबू बड़ी देर से आपको बुला रहे हैं। जल्दी चलिए।'' मैं भी हड़बड़ाया। इस समय आश्रम में थोड़े ही लोग हैं, इस आंधी-पानी में जरूर वृद्ध गुरुदेव को कोई तकलीफ होगी, नहीं तो क्यों उन्होंने जल्दी-जल्दी मुझे बुलाया...महादेव किसी और को कोई संदेशा पहुंचाने के लिए आगे बढ़ा और मुझे ललकारता गया—''देर न करें बाबू, मैं बहुत पहले चला था।'' मैंने मन में तरह-तरह की आशंका की। जल्दी से कुरता डाला और छाता उठाया। पर छाता ऐसा था जो पानी से पहले ही बरस पड़ता था, अतएव उसे रख देना पड़ा। एक चादर सिर पर रखकर भागा।

आकर देखा, गुरुदेव आनंदित हैं। मेघों की मसृणा मेदुरता और उत्क्षिप्त वायु का विलोल नर्तन उन्हें मस्त बना देता था। वे दक्खिन की ओर मुंह करके प्रसन्न भाव से आराम कुर्सी पर लेटे हुए थे और प्रसारित चरणों को थोड़ा हिला रहे थे। वे प्रकृति के उन्माद से छके जाने पड़ते थे। उन्हें देख मन में आशंका के भाव तो जाते रहे पर उत्सुकता बढ़ गयी—इस समय मुझे क्यों बुलाया गया है? क्या इस महान साधना का माध्यम साधक मुझे ही बनना है? मैं धीरे-धीरे उनके सामने गया, प्रणाम किया और एक मोढ़ा खींचकर बैठने लगा। गुरुदेव ने क्षण पर मुझे आश्चर्य के साथ देखा, फिर जरा भर्त्सना-सी करते हुए कहा—''इस आंधी-पानी में तुम भींगते-भींगते क्यों आये? मैंने तुम्हें इसी समय बुलाया था? जाओ, भीतर जाओ, शरीर पर कोई कपड़ा डाल आओ।'' मैंने नम्रतापूर्वक बताया कि मुझे ठंड नहीं लग रही है और चादर मेरे पास है। फिर एक कुर्सी की ओर इशारा करके बोले—''पैर ढककर उस पर बैठो।'' मैंने वैसा ही किया। थोड़ी देर वे फिर आसमान की ओर देखते रहे, फिर बोले, ''मैंने जब तुम्हें बुलाने को कहा था उस समय पानी आने का कोई लक्षण नहीं था। अब ऐसे सुंदर समय में तुम अनुस्वार-विसर्ग शुरू करोगे?'' इसी तरह की बातें वे कुछ देर तक करते रहे, फिर स्वयं धीरे-धीरे प्रकृत विषय पर आये। मैंने जिन शब्दों के बारे में संदेह किया था वे चंदरबरदाई के पृथ्वीराज रासो में व्यवहृत हुए थे और हॉर्नेल ने अपने गौड़ीय व्याकरण में उनका हवाला दिया था। गौड़ीय व्याकरण का वह अंश दिखाते हुए गुरुदेव ने विनोद के साथ कहा—''देखा, पढ़ा-लिखा नहीं हूं तो क्या!! बात निराधार नहीं लिखता!'' अपने नहीं पढ़ने-लिखने के बारे में वे प्रायः ही विनोदपूर्ण चुटकियां लिया करते थे। परंतु हम लोग जानते थे कि इस बिना पढ़े-लिखे आदमी का अध्ययन कितना व्यापक और गंभीर है। उनके विनोद में आधुनिक पढ़ाई-लिखाई पर भी शायद एक प्रच्छन्न व्यंग्य रहा करता होगा। थोड़ी देर तक व्याकरण पर कुछ बातचीत होती रही, फिर पाणिनी पर और फिर भारतवर्ष के संदेश पर बात जम गयी।

बाहर आकाश की रिमझिम तब भी जारी थी। हमारे सामने आंधी से आलोड़ित और वर्षा से प्लावित पुष्प-लताएं श्रांत भाव से उस शामक रिमझिम का आनंद ले रही थीं; नारियल के पेड़ चुपचाप आकाश की ओर कृतज्ञ दृष्टि से देख रहे थे और लाल कंकड़ों से आच्छादित अंग-भूमि प्रसन्न दिखायी दे रही थी। दूर एकाध झाऊ के पेड़ भीगी सनसनाहट से कभी-कभी निःस्तब्धता को चीर देते थे। धीरे-धीरे गुरुदेव मुझे अपनी बात समझा रहे थे। वे शुरू से आखिर तक सचेत कलाकार थे। असंयत भाव से, जैसे-तैसे किसी बात को कह देना उन्हें कभी पसंद नहीं था। सभी अवस्थाओं में, सभी बातें वे संवारकर, सुंदर और सहज बनाकर कहते थे। उनके डांटने में भी स्निग्धता रहती थी। मुझे ठीक स्मरण नहीं आ रहा कि भारतवर्ष की स्वाधीनता और विश्व को उसका क्या संदेश है इत्यादि बातें कैसे उठ गयीं। शायद मैंने कह दिया था कि भारतवर्ष शीघ्र ही स्वाधीन होगा और उसे विश्व के पुनर्निर्माण में हिस्सा लेना पड़ेगा। उस दिन के लिए भारतवर्ष को अब से ही तैयार हो जाना चाहिए—कुछ ऐसी ही बातें मैंने कही होंगी। गुरुदेव ने स्वयं 'साधना' में भारतवर्ष के इस संदेश की बात कही है, ऐसी मेरी धारणा थी। मुझे याद है कि उन्होंने प्रेम से मेरी बात सुनी और शांत भाव से उत्तर दिया कि इस बात के लिए तैयारी की जरूरत नहीं है। जरूरत इस बात की है कि भारतवर्ष तपस्या करके अपने को योग्य सिद्ध करे। यदि वह साधना करेगा, तो संसार स्वयं उसका संदेश सुनने के लिए उत्सुक होगा। आज भारतवर्ष में साधना का अभाव है। यदि आज वह स्वाधीन भी हो जाये तो संदेश सुनाने की योग्यता उसमें नहीं आयेगी। गुलामी केवल राजनीतिक थोड़े ही है! वह तो उसकी नस में व्याप्त हो चली है। अभी तुमने दुःख पाया कहां है? अभी पुराने पापों का बहुत प्रायश्चित बाकी है।

मैंने उन बातों का कोई नोट नहीं रखा है और न मेरी स्मरण-शक्ति ही इतनी तेज है कि उन्हें ज्यों-का-त्यों उद्धृत कर सकूं। परंतु मुझे खूब याद है कि उनकी बातें मुझे

बिलकुल नये रास्ते सोचने को मजबूर कर सकी थीं। मैंने अनुभव किया भारतवर्ष यदि आज ही विश्व के दरबार में उपस्थित हो तो उसे अपनी बात सुनाने का मौका ही नहीं दिया जायेगा। मैं यह बात उस महामानव के मुंह से सुन रहा था, जिसका संदेश सुनने के लिए पश्चिम और पूर्व की जनता समुद्र की भांति उमड़ पड़ती थी, जिसने उपेक्षित और अपमानित भारत को गड्ढे से उठाकर पहाड़ की चोटी पर बिठा दिया था। भारतीय मनीषा के सर्वोत्तम अंश के प्रतिनिधि रवीन्द्रनाथ थे; और उन्हीं के मुंह से मैंने क्या सुना! मेरा चित्त अशांत हो गया यद्यपि मैं ऐसा आदमी अपने को नहीं मानता, जो शहर की चिन्ता में दुबला हो जाया करता है। मुझे वह सुहावना समय, वह भव्य मूर्ति और झकझोर देने वाली वे बातें कल की-सी मालूम हो रही हैं। उस दिन उन्होंने कुछ उत्तेजित होकर ही कहा था कि भारतीय समाज तब तक शक्ति-संचय नहीं कर सकता जब तक वह साहसपूर्वक सत्य को स्वीकार न कर ले; परंतु तुम जानते हो, सत्य को स्वीकार करने का महसूल इस देश में कितना है? दीर्घकाल तक सच्चे मनुष्यों की बलि पाकर ही इस देश की शक्ति प्रसन्न हो सकती है। अभी तुमने बलि दी ही कहां है?

सं. 1969 में उन्होंने एक आश्रमवासी के नाम पत्र लिखा था। उसमें ये ही बातें लिखी गयी हैं। यह पत्र छप चुका है और उनहोंने ही इसे छापने की अनुमति भी दी थी। उसी पत्र से इस प्रसंग की बातें यहां उद्धृत की जा रही हैं। इस उद्धरण में ऊपर की बातें उन्हीं की भाषा में लिखी मिलेंगी। अनुवाद मेरा है : मनुष्य बनाने का जो सबसे बड़ा विद्यालय है वह हमारे लिए बंद है। हमारे वर्तमान की ओर देखकर हमारी जीवन-यात्रा के प्रति उसकी कोई जिम्मेदारी नहीं रह गयी है। किसी दिन किसी विशेष अवस्था में हमारे समाज ने किसी को ब्राह्मण, किसी को क्षत्रिय, किसी को वैश्य और किसी को शूद्र होने को कहा था। हमारे ऊपर उस समाज का यह कालोपयोगी दावा था। इसलिए इस दावे को लक्ष्य बनाकर शिक्षा-व्यवस्था ने विचित्र आकार में अपने आप की सृष्टि स्वयं ही कर ली थी, क्योंकि सृष्टि का नियम ही यही है—एक मूलभाव का बीज जीवन के तकाजे पर स्वमेव अपनी शाखा-प्रशाखा फैलाकर अंकुरित-पल्लवित हो जाता है—बाहर से आकर कोई उसमें शाखा-प्रशाखा जोड़ नहीं देता।

हमारे वर्तमान समाज का कोई सजीव दावा नहीं है। यहां वह मनुष्य से कहता है—ब्राह्मण बनो! वह जो कुछ कह रहा है उसका ठीक-ठीक पालन कर सकना किसी प्रकार भी संभव नहीं है। इसका फल यह हुआ है कि मनुष्य उसे केवल बाहर से मान लेता है। ब्राह्मण का ब्रह्मचर्य नहीं रह गया है, सिर मुंडाकर तीन दिन के प्रहसन के बाद गले में जनेऊ धारण कर लेना पड़ता है। तपस्या के पवित्र जीवन की शिक्षा अब ब्राह्मण नहीं दे सकता, किन्तु पदधूलि देने के समय निःसंकोच उसके पैर सबके लिए खुले हैं। इधर जातिभेद की मूल भित्ति वृत्तिभेद लुप्त हो चला है, फिर भी वर्णभेद के सभी विधि-निषेध अचल होकर जहां के तहां जमे हुए हैं। पिंजड़े को उसके सभी सलाई-सींखचों के साथ मानना पड़ रहा है, हालांकि उसमें का पक्षी मर चुका है। दाना-पानी हम नित्य जुटा रहे हैं, हालांकि वह किसी जीवधारी की खुराक के काम नहीं आ रहा है।

'इसी प्रकार हमारे सामाजिक जीवन के साथ सामाजिक विधि का विच्छेद घटित हो जाने से हम अनावश्यक काल-विरोधी व्यवस्था की बाधा पा रहे हैं। इतना ही नहीं है, बल्कि हम सामाजिक सत्य की रक्षा भी नहीं कर पा रहे हैं। हम मूल्य देते हैं और लेते हैं, फिर भी उसके बदले में कोई सत्य वस्तु नहीं पा रहे हैं। शिष्य गुरु को प्रणाम करके दक्षिणा चुका देता है किन्तु गुरु शिष्य का कर्जा चुका देने का प्रयत्न भी नहीं करता। इसे स्वीकार करने में हम जरा भी लज्जा अनुभव नहीं करते कि बाहर का ठाठ बनाये रखना ही काफी है, यहां तक कि हमें यह कहने में भी कोई संकोच नहीं होता कि व्यवहार में यथेच्छाचार करके भी प्रकाश्य रूप में उसे स्वीकार न करने में कोई नुकसान नहीं है। ऐसी जिम्मेदारी मनुष्य को गरज से स्वीकार करनी पड़ती है। कारण यह है कि जब तुम्हारी श्रद्धा दूसरे रास्ते गयी हो, तब भी यदि समाज कठोर शासन द्वारा आचार को एक ही जगह बांध रखे तो समाज के पंद्रह आने आदमी मिथ्याचार का आश्रय लेने में लज्जा नहीं अनुभव करते।

'बात यह है कि मनुष्यों में वीरों की संख्या थोड़ी ही होती है; अतएव सत्य को प्रकाश्य रूप में स्वीकार करने का दंड जहां असह्य रूप से अत्यधिक है, वहां कपटाचार को अपराध मानने से काम नहीं चलता। इसीलिए हमारे देश में यह अद्‌भुत घटना प्रतिदिन देखी जाती है कि मनुष्य किसी बात को अच्छी कह कर अनायास ही स्वीकार कर लेता है और फिर दूसरे ही क्षण अम्लानवदन बना रहकर कह सकता है कि सामाजिक व्यवहार में मैं इसका पालन नहीं कर सकूंगा। हम भी जब सोचकर देखते हैं कि इस समाज में अपने सत्य विचार को कार्यरूप में परिणत करने का महसूल कितना अधिक है, तो इस मिथ्याचार को क्षमा कर देते हैं।

'अतएव समाज ने जहां जीवन-प्रवाह के साथ अपने स्वास्थ्यकर सामंजस्य का पथ एकदम खुला नहीं रखा और इसीलिए पुराकाल की व्यवस्था पद-पद पर बाधास्वरूप उसे बद्ध कर रही है, वह हमारे लिए केवल बंद ही नहीं है, स्थिति उससे भी भयंकर है। वह है और फिर भी नहीं है, इसीलिए वह सत्य के लिए रास्ता नहीं छोड़ देती और मिथ्या को जमाकर रखती है। हमारा यह समाज गति को एकदम से स्वीकार नहीं करता और इसीलिए स्थिति को कलुषित बना देता है।

ठीक ही तो है, हमारे समाज में सत्य को स्वीकार करने का महसूल कितना कड़ा है! और सत्य को स्वीकार किये बिना क्या हम विश्व के दरबार में सिर ऊंचा करके खड़े हो सकेंगे? ❑

सवाल अछूत का

❑ शहीद भगत सिंह

हमारे देश—जैसे बुरे हालात किसी दूसरे के नहीं हुए। यहां अजब-अजब सवाल उठते रहते हैं। एक हम सवाल अछूत समस्या है। समस्या यह है कि 30 करोड़ की जनसंख्या वाले देश में जो 6 करोड़ लोग अछूत कहलाते हैं, उनके स्पर्श मात्र से धर्म भ्रष्ट हो जायेगा! उनके मंदिरों में प्रवेश से देवगण नाराज हो उठेंगे! कुएं से उनके द्वारा पानी निकालने से कुआं अपवित्र हो जायेगा! ये सवाल बीसवीं सदी में किये जा रहे हैं, जिन्हें कि सुनते ही शर्म आती है। हमारा देश बहुत अध्यात्मवादी है, लेकिन हम मनुष्य को मनुष्य का दर्जा देते हुए भी झिझकते हैं जबकि पूर्णतया भौतिकवादी कहलाने वाला यूरोप कई सदियों से इन्कलाब की आवाज उठा रहा है। उन्होंने अमेरिका और फ्रांस की क्रांतियों के दौरान ही समानता की घोषणा कर दी थी। आज रूस ने भी हर प्रकार का भेदभाव मिटा कर क्रांति के लिए कमर कसा हुआ है। हम सदा ही आत्मा-परमात्मा के वजूद को लेकर चिन्तित होने तथा इस जोरदार बहस में उलझे हुए हैं कि क्या अछूत को जनेऊ दे दिया जायेगा? वे वेद-शास्त्र पढ़ने के अधिकारी हैं अथवा नहीं? हम उलाहना देते हैं कि हमारे साथ विदेशों में अच्छा सलूक नहीं होता। अंग्रेजी शासन हमें अंग्रेजों के समान नहीं समझता। लेकिन क्या हमें यह शिकायत करने का अधिकार है? सिंध के एक मुस्लिम सज्जन श्री नूर मुहम्मद ने, जो बम्बई कौंसिल के सदस्य हैं, इस विषय पर 1926 में खूब कहा—'If the Hindu Society refuses to allow after other human beings, follow creatures so that to attend public school, and if. The president of local board representing so many lakhs of people in the horse refuses to allow his fellows and brothers the elementary human right of having water to drink, what right have they to ask for more rights from the bureaucracy? Before we accuse people coming from other lands, we should see how we ourselves behavetoward our own people. How can we ask for greater political rights when we ourselves deny relementary rights of human beings.'

वे कहते हैं कि जब तुम एक इनसान को पीने के लिए पानी देने से भी इनकार करते हो, जब तुम उन्हें स्कूल में भी पढ़ने नहीं देते तो तुम्हें क्या अधिकार है कि अपने लिए अधिक अधिकारों की मांग करो? जब तुम एक इनसान को समान अधिकार देने से भी इनकार करते हो तो तुम अधिक राजनीतिक अधिकार मांगने के अधिकारी कैसे बन गये? बात बिल्कुल खरी है। लेकिन यह क्योंकि एक मुस्लिम ने कही है हिन्दू कहेंगे कि देखो, वह उन अछूतों को मुसलमान बना कर अपने में शामिल करना चाहते हैं। जब तुम उन्हें इस तरह पशुओं से भी गया-बीता समझोगे तो वह जरूर ही दूसरे धर्मों में शामिल हो जायेंगे, जिनमें उन्हें अधिक अधिकार मिलेंगे, जहां उनसे इनसानों-जैसा व्यवहार किया जायेगा। फिर यह कहना कि देखो जी, ईसाई और मुसलमान हिन्दू कौम को नुकसान पहुंचा रहे हैं, व्यर्थ होगा। कितना स्पष्ट कथन है, लेकिन यह सुनकर सभी तिलमिला उठते हैं। ठीक इसी तरह की चिन्ता हिन्दुओं को भी हुई। सनातनी पंडित भी कुछ-न-कुछ इस मसले पर सोचने लगे। बीच-बीच में बड़े 'युगांतरकारी' कहे जाने वाले भी शामिल हुए। पटना में हिन्दू महासभा का सम्मेलन लाला लाजपत राय—जो कि अछूतों के बहुत पुराने समर्थक चले आ रहे हैं—की अध्यक्षता में हुआ, जो जोरदार बहस छिड़ी। अच्छी नोंक-झोंक हुई। समस्या यह थी कि अछूतों को यज्ञोपवीत धारण करने का हक है अथवा नहीं? तथा क्या उन्हें वेद-शास्त्रों का अध्ययन करने का अधिकार है? बड़े-बड़े समाज-सुधारक तमतमा गये, लेकिन लालाजी ने सबको सहमत कर दिया तथा यह दो बातें स्वीकृत कर हिन्दू धर्म की लाज रख ली। वरना जरा सोचो, कितनी शर्म की बात होती। कुत्ता हमारी गोद में बैठ सकता है। हमारी रसोई में निःसंग फिरता है, लेकिन एक इनसान का हमसे स्पर्श हो जाये तो बस धर्म भ्रष्ट हो जाता है। इस समय मालवीय जी जैसे बड़े समाज-सुधारक, अछूतों के बड़े प्रेमी और न जाने क्या-क्या पहले एक मेहतर के हाथों गले में हार डलवा लेते हैं, लेकिन कपड़ों सहित स्नान किये बिना स्वयं को अशुद्ध समझते हैं! क्या खूब यह चाल है! सबको प्यार करने वाले भगवान की पूजा करने के लिए मंदिर बना है लेकिन वहां अछूत जा घुसे तो वह मंदिर अपवित्र हो जाता है! भगवान रुष्ट हो जाता है! घर की जब यह स्थिति हो तो बाहर हम बराबरी के नाम पर झगड़ते अच्छे लगते हैं? तब हमारे इस रवैये में कृतघ्नता की भी हद पायी जाती है। जो निम्नतम काम करके हमारे लिए सुविधाओं को उपलब्ध कराते हैं उन्हें ही हम दुरदुराते हैं। पशुओं की हम पूजा कर सकते हैं, लेकिन इनसान को पास नहीं बिठा सकते! आज इस सवाल पर बहुत शोर हो रहा है। उन विचारों पर आजकल विशेष ध्यान दिया जा रहा है। देश में मुक्ति कामना जिस तरह बढ़ रही है, उसमें साम्प्रदायिक भावना ने और कोई लाभ पहुंचाया हो अथवा नहीं लेकिन एक लाभ जरूर पहुंचाया है।

अधिक अधिकारों की मांग के लिए अपनी-अपनी कौमों की संख्या बढ़ाने की चिन्ता सबको हुई। मुस्लिमों ने जरा ज्यादा जोर दिया। उन्होंने अछूतों को मुसलमान बनाकर अपने बराबर अधिकार देने शुरू कर दिये। इससे हिन्दुओं के अहम को चोट पहुंची। स्पर्धा बढ़ी। फसाद भी हुए। धीरे-धीरे सिखों ने भी सोचा कि हम पीछे न रह जायें। उन्होंने भी अमृत छकाना आरंभ कर दिया। हिन्दू-सिखों के बीच अछूतों के जनेऊ उतारने या केश कटवाने के सवालों पर झगड़े हुए। अब तीनों कौमें अछूतों को अपनी-अपनी ओर खींच रही है। इसका बहुत शोर-शराबा है। इधर ईसाई चुपचाप उनका रुतबा बढ़ा रहे हैं। चलो, इस सारी हलचल से ही देश के दुर्भाग्य की लानत दूर हो रही है। इधर जब अछूतों ने देखा कि उनकी वजह से इनमें फसाद हो रहे हैं तथा उन्हें हर कोई अपनी अपनी खुराक समझ रहा है तो वे अलग ही क्यों न संगठित हो जायें? इस विचार के अमल में अंग्रेजी सरकार का कोई हाथ हो अथवा न हो लेकिन इतना अवश्य है कि इस प्रचार में सरकारी मशीनरी का काफी हाथ था। 'आदि धर्म मंडल' जैसे संगठन उस विचार के प्रचार का परिणाम हैं। अब एक सवाल और उठता है कि इस समस्या का सही निदान क्या हो? इसका जवाब बड़ा अहम है। सबसे पहले यह निर्णय कर लेना चाहिए कि सब इनसान समान हैं तथा न तो जन्म से कोई भिन्न पैदा हुआ और न कार्य-विभाजन से। अर्थात क्योंकि एक आदमी गरीब मेहतर के घर पैदा हो गया है, इसलिए जीवन भर मैला ही साफ करेगा और दुनिया में किसी तरह के विकास का काम पाने का उसे कोई हक नहीं है, ये बातें फिजूल हैं। इस तरह हमारे पूर्वज आर्यों ने इनके साथ ऐसा अन्यायपूर्ण व्यवहार किया तथा उन्हें नीच कह कर दुत्कार दिया एवं निम्नकोटि के कार्य करवाने लगे। साथ ही यह भी चिन्ता हुई कि कहीं ये विद्रोह न कर दें, तब पुनर्जन्म के दर्शन का प्रचार कर दिया कि यह तुम्हारे पूर्व जन्म के पापों का फल है। अब क्या हो सकता है। चुपचाप दिन गुजारो! इस तरह उन्हें धैर्य का उपदेश देकर वे लोग उन्हें लंबे समय तक के लिए शांत करा गये। लेकिन उन्होंने बड़ा पाप किया। मानव के भीतर की मानवीयता को समाप्त कर दिया। आत्मविश्वास एवं स्वावलंबन की भावनाओं को समाप्त कर दिया। बहुत दमन और अन्याय किया गया। आज उस सबके प्रायश्चित का वक्त है। इसके साथ एक दूसरी गड़बड़ी हो गयी। लोगों के मन में आवश्यक कार्यों के प्रति घृणा पैदा हो गयी। हमने जुलाहे को भी दुत्कारा। आज कपड़ा बुनने वाले भी अछूत समझे जाते हैं। यू. पी. की तरफ कहार भी अछूत समझा जाता हैं इससे बड़ी गड़बड़ी पैदा हुई। ऐसे में विकास की प्रक्रिया में रुकावटें पैदा हो रही हैं। इन तबकों को अपने समक्ष रखते हुए हमें चाहिए कि हम न इन्हें अछूत कहें और न समझें। बस, समस्या हल हो जाती है। नौजवान भारत सभा तथा नौजवान कांग्रेस ने जो ढंग अपनाया है वह काफी अच्छा है। जिन्हें आज तक अछूत कहा जाता रहा उनसे अपने इन पापों के लिए क्षमायाचना करनी चाहिए तथा उन्हें अपने जैसा इनसान समझना, बिना अमृत छकाए, बिना कलमा पढ़ाए या शुद्धि किये उन्हें अपने में शामिल करके उनके हाथ से पानी पीना, यही उचित ढंग है। और आपस में खींचतान करना और व्यवहार में कोई भी हक न देना, कोई ठीक बात नहीं है। जब गांवों में मजदूर-प्रचार शुरू हुआ उस समय किसानों को सरकारी आदमी यह बात समझा कर भड़काते थे कि देखो, यह भंगी-चमारों को सिर पर चढ़ा रहे हैं और तुम्हारा काम बंद करवायेंगे। बस किसान इतने में ही भड़क गये। उन्हें याद रहना चाहिए कि उनकी हालत तब तक नहीं सुधर सकती जब तक कि वे इन गरीबों को नीच और कमीन कह कर अपनी जूती के नीचे दबाए रखना चाहते हैं। अक्सर कहा जाता है कि वह साफ नहीं रहते। इसका उत्तर साफ है—वे गरीब हैं। गरीबी का इलाज करो। ऊंचे-ऊंचे कुलों के गरीब लोग भी कोई कम गंदे नहीं रहते। गंदे काम करने का बहाना भी नहीं चल सकता, क्योंकि माताएं बच्चों का मैला साफ करने से मेहतर तथा अछूत तो नहीं हो जातीं। लेकिन यह काम उतने समय तक नहीं हो सकता जितने समय तक कि अछूत कौमें अपने आपको संगठित न कर लें। हम तो समझते हैं कि उनका स्वयं को अलग संगठनबद्ध करना तथा मुस्लिमों के बराबर गिनती में होने के कारण उनके बराबर अधिकारों की मांग करना बहुत आशाजनक संकेत है। या तो सांप्रदायिक भेद का झंझट ही खत्म करो, नहीं तो उनके अलग अधिकार उन्हें दे दो। कौंसिलों और असेम्बलियों का कर्तव्य है कि वे स्कूल-कालेज, कुएं तथा सड़क के उपयोग की पूरी स्वतंत्रता उन्हें दिलायें। जबानी तौर पर ही नहीं, वरन साथ ले जाकर उन्हें कुंओं पर चढ़ायें। उनके बच्चों को स्कूलों में प्रवेश दिलायें। लेकिन जिस लेजिस्लेटिव में बाल विवाह के विरुद्ध पेश किये बिल तथा मजहब के बहाने हाय-तौबा मचायी जाती है, वहां वे अछूतों को अपने साथ शामिल करने का साहस कैसे कर सकते हैं? इसलिए हम मानते हैं कि उनके अपने जन-प्रतिनिधि हों। वे अपने लिए अधिक अधिकार मांगें। हम तो साफ कहते हैं कि उठो, अछूत कहलाने वाले असली जनसेवकों तथा भाइयो! उठो! अपना इतिहास देखो। गुरु गोविन्द सिंह की फौज की असली शक्ति तुम्हीं थे! शिवाजी तुम्हारे भरोसे पर ही सब कुछ कर सके, जिस कारण उनका नाम आज भी जिन्दा है। तुम्हारी कुर्बानियां स्वार्णक्षरों में लिखी हुई हैं। तुम जो नित्यप्रति सेवा करके जनता के सुखों में बढ़ोत्तरी करके और जिन्दगी संभव बना कर यह बड़ा भारी अहसान कर रहे हो, उसे हम लोग नहीं समझते। लेंड-एलियेनेशन एक्ट के अनुसार तुम धन एकत्र कर भी जमीन नहीं खरीद सकते। तुम पर इतना जुल्म हो रहा है कि मिस मेयो मनुष्यों से भी

कहती हैं—उठो, अपनी शक्ति पहचानो। संगठनबद्ध हो जाओ। असल में स्वयं कोशिश किये बिना कुछ भी न मिल सकेगा। (Those who would be free must themeselves strike the blow.) स्वतंत्रता के लिए स्वाधीनता चाहने वालों को यत्न करना चाहिए। इनसान की धीरे-धीरे कुछ ऐसी आदतें हो गयी हैं कि वह अपने लिए तो अधिक अधिकार चाहता है, लेकिन जो उनके मातहत हैं उन्हें वह अपनी जूती के नीचे ही दबाये रखना चाहता है। कहावत है—'लातों के भूत बातों से नहीं मानते'। अर्थात संगठनबद्ध हो अपने पैरों पर खड़े होकर पूरे समाज को चुनौती दे दो। तब देखना, कोई भी तुम्हें तुम्हारे अधिकार देने से इनकार करने की जुर्रत न कर सकेगा। तुम दूसरों की खुराक मत बनो। तब देखना, कोई भी तुम्हें तुम्हारे अधिकार देने से इनकार करने की जुर्रत न कर सकेगा। तुम दूसरों की खुराक मत बनो। दूसरों के मुंह की ओर न ताको। लेकिन ध्यान रहे, नौकरशाही के झांसे में मत फंसना। यह तुम्हारी कोई सहायता नहीं करना चाहती, बल्कि तुम्हें अपना मोहरा बनाना चाहती है। यही पूंजीवादी नौकरशाही तुम्हारी गुलामी और गरीबी का असली कारण है। इसलिए तुम उसके साथ कभी न मिलना। उसकी चालों से बचना। तब सब कुछ ठीक हो जायेगा। तुम असली सर्वहारा हो... संगठनबद्ध हो जाओ। तुम्हारी कुछ भी हानि न होगी। बस गुलामी की जंजीरें कट जायेंगी। उठो, और वर्तमान व्यवस्था के विरुद्ध बगावत खड़ी कर दो। धीरे-धीरे होने वाले सुधारों के विरुद्ध बगावत खड़ी कर दो। धीरे-धीरे होने वाले सुधारों से कुछ नहीं बन सकेगा। सामाजिक आंदोलन से क्रांति पैदा कर दो तथा राजनीतिक और आर्थिक क्रांति के लिए कमर कस लो। तुम ही तो देश का मुख्य आधार हो, वास्तविक शक्ति हो। सोए हुए शेरो! उठो और बगावत खड़ी कर दो।

(भगत सिंह के संपूर्ण दस्तावेज से) ❑

किसे डर लगता है दलितों से

❑ शफीक आलम

शायद ही कोई ऐसा चुनावी मंच हो जहां से प्रधानमंत्री मोदी ने सबका साथ सबका विकास और संविधान को ग्रंथ मानने की बात नहीं की हो, लेकिन अफसोस कि मंत्रों से कहे जाने वाले वे नारे धरातल पर नहीं उतर सकें। दलितों, आदिवासियों और वंचित तबकों पर जिस तरह से लाठियां बरसाई जा रही हैं, जिस तरह दलित अस्मिता के प्रतीकों पर हमले हो रहे हैं और जिस तरह दलितों से उनके आवाज उठाने और सवाल करने के अधिकार को छीनने की कोशिश हो रही है, इनसे मौजूदा सरकार की नीति और नियत का पता चलता है, प्रस्तुत है सरकारी आंकड़ों और तथ्यों के जरिए पिछले चार सालों के दौरान देश में दलितों और आदिवासियों की स्थिति की पड़ताल करती रिपोर्ट। –सं.

देश में दलितों, आदिवासियों और वंचित तबकों की हालत पिछले 4 साल में कितनी बेहतर हुई है या कितनी बदतर हुई है, इसका जायजा लेने से पहले हाल में सुप्रीम कोर्ट के एक आदेश को समझना जरूरी है। सुप्रीम कोर्ट ने लोकसेवकों यानी सरकारी अधिकारियों के खिलाफ अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) कानून के दुरुपयोग पर विचार करते हुए कहा है कि इस कानून के तहत दर्ज ऐसे मामलों में फौरन गिरफ्तारी नहीं होनी चाहिए। सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि एससी/एसटी कानून के तहत दर्ज मामलों में किसी भी सरकारी अधिकारी की गिरफ्तारी से पहले डीएसपी स्तर के अधिकारी द्वारा प्राथमिक जांच जरूर करायी जानी चाहिए। इसके अलावा इन मामलों में अग्रिम जमानत भी दी जा सकती है। इस खबर पर कहीं कोई चर्चा नहीं हुई, कोई बहस नहीं हुई, किसी राजनीतिक दल ने इस पर कोई टिप्पणी नहीं की।

देश में दलित उत्पीड़न की घटनाओं को देखकर सभ्य समाज का माथा भी शर्म से झुक जायेगा। रविदास जयंती मना रहे दलितों के साथ मध्य प्रदेश के दमोह में मारपीट की जाती है। हरियाणा के फरीदाबाद में पंचायत चुनाव में वोट न देने पर दलितों की पिटाई होती है। आगरा में एक दलित परिवार की सिर्फ इसलिए पिटाई कर दी गयी, क्योंकि उनमें से एक का हाथ गलती से एक ब्राह्मण से छू गया था। कन्नौज में एक दलित महिला के साथ रेप के बाद उसे एसिड से नहला दिया गया। चित्तौड़गढ़ में बाइक चोरी के आरोप में दलित बच्चों को नंगा करके पीटा गया। गुजरात में दलितों की पिटाई के बाद तो उन्होंने बड़ा आंदोलन भी किया। ताजा मामला कोरेगांव में फैली हिंसा है। इसके अलावा, त्रिपुरा चुनाव परिणाम आने के बाद देश भर में कट्टरवादी तत्त्वों ने दलित अस्मिता के प्रतीक बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर और पेरियार की मूर्तियां तोड़ दीं।

इसके अलावा, देश में छुआछूत की समस्या भी काफी बड़ी है। इससे दलित एवं कमजोर वर्ग ही सर्वाधिक प्रभावित होता है, जो भेदभाव और तरह-तरह के उत्पीड़न को झेलने के लिए मजबूर है। यहां किसी दलित के खाना बनाने से खाने को अपवित्र मानने वाले लोग भी मौजूद हैं। यहां तक कि स्कूल के मिड-डे-मील तक में भेदभाव की खबरें आती रहती हैं। एक अनुमान के मुताबिक, देश के 27 फीसदी से ज्यादा लोग किसी न किसी रूप में छुआछूत को मानते हैं। अब हम नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो की बात करते हैं। यह भारत सरकार की एक संस्था है, जो हर साल दलितों के खिलाफ अत्याचार के आंकड़े जारी करती है।

भाजपा शासित राज्यों में उत्पीड़न

अधिक : साल 2016 के नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो के आंकड़े बताते हैं कि भारतीय जनता पार्टी शासित राज्यों में दलितों के खिलाफ अपराध के मामलों में बढ़ोत्तरी हुई। अपराध दर के मुताबिक, इस सूची में पहला स्थान मध्य प्रदेश का है। 2014 में मध्य प्रदेश में अनुसूचित जाति के खिलाफ अपराध के 3294 मामले दर्ज हुए, जो 2015 में 3546 और 2016 में 4922 तक पहुंचे। इसके बाद राजस्थान है, जहां दलितों के खिलाफ अपराध में 12.6 फीसदी की बढ़ोत्तरी हुई है। राजस्थान में 2014 में 6735 अपराध दर्ज हुए हैं, जो 2015 में 5911 और 2016 में 5136 तक पहुंचे। अपराध के मामले में तीसरे नंबर पर गोवा आता है और इसके बाद बिहार का नंबर है, जहां भाजपा और जदयू सत्ता में है। बिहार 2016 में 5701 मामले दर्ज किये गये। 2016 में पूरे देश में कुल अपराधों में से 14 फीसदी अपराध बिहार में ही हुए हैं। वहीं, गुजरात में 2014 के मुकाबले अपराध की संख्या में बढ़ोत्तरी हुई है। 2014 में जहां गुजरात में 1094 आपराधिक केस दर्ज किये गये, वहीं 2016 में ये आंकड़ा 1322 तक पहुंचा।

एनसीआरबी के 2015 के आंकड़े भी बताते हैं कि भाजपा शासित राज्य दलित उत्पीड़न के मामले में बाकी के राज्यों से बहुत आगे हैं। साल 2014 में भी कमोबेश यही हालत रही है। 2015 में दलितों के खिलाफ कुल 45003 अपराध की घटनाएं हुईं। 2014 में ये संख्या 47064 थी। 2015 में प्रति एक लाख दलित आबादी पर होने वाले अपराध का राष्ट्रीय दर 22.3 है। 2015 में उत्तर प्रदेश में 8358, राजस्थान में 6998, बिहार में 6438, आंध्र प्रदेश में 4415, मध्य प्रदेश में 4188, ओडीशा में 2305, महाराष्ट्र में 1816, तमिलनाडु में 1782, गुजरात में 1046, छत्तीसगढ़ में 10128 और झारखंड में 752 अपराध दलितों के ऊपर हुए। दलितों के खिलाफ अपराध का राष्ट्रीय दर जहां 22.3, गोवा में 51.1, बिहार में 38.9, मध्य प्रदेश में 36.9, ओडीशा में 32.1, छत्तीसगढ़ में 31.4 रहा। 2015 में दलितों की हत्या के 707 मामले सामने आये। सबसे अधिक हत्या की घटनाएं मध्य प्रदेश, राजस्थान, बिहार, महाराष्ट्र, ओडीशा, गुजरात तथा उत्तर प्रदेश में हुई। 2015 में दलित महिलाओं के साथ बलात्कार के कुल 2326 मामले सामने आये, वहीं दलित महिलाओं के अपहरण के भी 687 मामले सामने आये।

आदिवासी और शहरी दलित भी निशाने पर : साल 2015 में आदिवासियों के खिलाफ 10914 अपराध के मामले सामने आये। इसमें राजस्थान में 3207, मध्य प्रदेश में 1531, छत्तीसगढ़ में 1518, ओडीशा में 1307, आंध्र प्रदेश में 719, तेलंगाना में 698, महाराष्ट्र में 483, गुजरात में 256 और झारखंड में 269 अपराध शामिल हैं। 2015 में अनुसूचित जनजाति के विरुद्ध हत्या के 144 अपराध के मामले सामने आये। ये घटनाएं भी भाजपा शासित राज्यों में अधिक हुई। इसी तरह बलात्कार के 952 मामले सामने आये। दुःखद बात ये है कि आदिवासियों के खिलाफ आईपीसी के 4203 ऐसे मामले रहे, जिनमें एससी/एसटी एक्ट का इस्तेमाल नहीं हुआ। एनसीआरबी के 2016 के आंकड़ों के मुताबिक, ये सच सामने आया है कि अब शहरों में दलितों के खिलाफ अपराध की घटनाएं सामने आ रही हैं। उत्तर प्रदेश और बिहार में दलितों के खिलाफ अधिकतम अपराध दर्ज किये गये हैं। एनसीआरबी ने 2016 में 19 महानगरीय शहरों में जाति आधारित अत्याचार के आंकड़े पहली बार जारी किये थे। लखनऊ और पटना इस सूची में सबसे ऊपर हैं। उत्तर प्रदेश में 2016 में दलितों के खिलाफ अपराध के 10426 मामले दर्ज किये गये थे, जो पूरे देश में कुल मामलों में से 26 प्रतिशत है। बिहार 5701 ऐसी घटनाओं (14 प्रतशत) के साथ दूसरे स्थान पर है, जबकि राजस्थान 5134 घटनाओं (13 प्रतिशत) के साथ तीसरे स्थान पर है। शहरों में हैदराबाद 139 मामालें (9 प्रतिशत) के साथ पांचवें स्थान पर रहा। 2016 में दलितों के खिलाफ कुल 40801 अपराध हुए।

10 साल के दौरान उत्पीड़न : भारत में हर 15 मिनट में एक दलित का उत्पीड़न होता है। राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) के आंकड़ों के मुताबिक पिछले 10 साल (2007-2017) में दलित उत्पीड़न के मामलों में 66 फीसदी की वृद्धि दर्ज हुई। एनसीआरबी की रिपोर्ट के अनुसार, पिछले 10 साल में देश में रोजाना छह दलित महिलाओं से दुष्कर्म के मामले दर्ज किये गये। इस दौरान रोजान देश में छह दलित महिलाओं से दुष्कर्म के मामले दर्ज किये गये, जो 2007 की तुलना में दो गुना है। आंकड़ों के मुताबिक, भारत में हर 15 मिनट में दलितों के साथ आपराधिक घटनाएं हुईं। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) द्वारा जारी आंकड़े देश में दलितों की समाज में स्थिति और उनकी दशा की कहानी बयां करते हैं। आंकड़ों के मुताबिक, पिछले चार साल में दलित विरोधी हिंसा के मामले में तेजी से वृद्धि हुई है। 2006 में दलितों के खिलाफ अपराध के कुल 27070 मामले सामने आये जो 2011 में बढ़कर 33719 हो गये। वर्ष 2014 में अनुसूचित जाति के साथ अपराध के 40401 मामले, 2015 में 38670 मामले और 2016 में 40801 मामले दर्ज किये गये। एनसीआरबी के आंकड़ों के मुताबिक, 10 साल में दलित महिलाओं के साथ दुष्कर्म के मामलों में दोगुनी वृद्धि हुई। रिपोर्ट के मुताबिक, 2006 में प्रत्येक दिन दलित महिलाओं के साथ दुष्कर्म के केवल तीन मामले दर्ज होते थे, जो 2016 में बढ़कर 6 हो गये। एनसीआरबी के आंकड़ों से चौंकाने वाली बात सामने आयी है। 2014 से 2016 के दौरान जिन राज्यों में दलित उत्पीड़न के सबसे अधिक मामले दर्ज हुए, उन राज्यों में या तो भारतीय जनता पार्टी की सरकार है या फिर उसके सहयोगी की। दलित उत्पीड़न में सबसे आगे रहे राज्यों की

बात करें तो मध्य प्रदेश दलित उत्पीड़न में सबसे आगे रहा। 2014 में राज्य में दलित उत्पीड़न के 3294 मामले दर्ज हुए, जिनकी संख्या 2015 में बढ़कर 3546 और 2016 में 4922 तक जा पहुंची। देश में दलितों पर हुए अत्याचार में मध्य प्रदेश का हिस्सा 12.1 फीसदी रहा।

जेलों में दलित : देश के कुल कैदियों में तकरीबन 68 प्रतिशत कैदी ऐसे हैं जिन्हें अदालत से सजा नहीं मिली है। यानी ये केवल आरोपी हैं। इन कैदियों में देश के सबसे कमजोर वर्ग से संबंध रखने वाले विचाराधीन और सजायाफ्ता कैदियों की संख्या आश्चर्यजनक रूप से अधिक है। 2015 के आंकड़ों के मुताबिक कुल 282076 विचाराधीन कैदियों में से 61139 (21.6 प्रतिशत) का संबंध दलित समाज से था, 34999 (12.4 प्रतिशत) का संबंध आदिवासियों से था, 88809 (31.5 प्रतिशत) ओबीसी समाज से आने थे, जबकि मुस्लिम विचाराधीन कैदियों की संख्या 59053 (20.9 प्रतिशत) थी। यदि इस वर्ष सजायाफ्ता कैदियों की बात करें तो कुल 134168 सजायफ्ता कैदियों में 28033 (20.9 प्रतिशत दलित थे, 18403 (13.7 प्रतिशत) का संबंध अनुसूचित जनजातियों से था, 45801 (34.1 प्रतिशत) ओबीसी से संबंधित थे, जबकि 21220 (15.8 प्रतिशत) मुस्लिम थे। वर्ष 2014 के आंकड़े भी देश के जेलों की लगभग 2015 जैसी ही तस्वीर पेश करते हैं। इस वर्ष कुल 282879 विचाराधीन कैदियों में 57045 (20.2 प्रतिशत) कैदी दलित थे, 31648 (11.2 प्रतिशत) का संबंध अनुसूचित जनजातियों से था, 88448 (31.3 प्रतिशत) ओबीसी और 59550 (21.1 प्रतिशत) मुसलमान थे। यह हकीकत किसी से छुपी नहीं है कि भारत के जेलों में विचाराधीन कैदियों की संख्या जेलों की क्षमता से कई गुना अधिक है।

अब इस तस्वीर का एक और पहलू देखते हैं, यदि दलित, आदिवासी और ओबीसी के आंकड़ों को मिला दिया जाये तो वर्ष 2015 में देश के कुल विचाराधीन कैदियों में 65.6 प्रतिशत का संबंध इन तीन वर्गों से था। यदि दलित, आदिवासी और मुस्लिम विचाराधीन कैदियों को एक साथ रखकर देखें तो 2014 में देश के कुल विचाराधीन कैदियों में 52 प्रतिशत का संबंध इन तीन8 वर्गों से है। ये आंकड़े यह भी जाहिर करते हैं कि जेलों में दलितों और मुस्लिम कैदियों की संख्या उनकी आबादी के अनुपात से कहीं अधिक है। यह संख्या दलितों के प्रति व्याप्त दुर्भावना को भी उजागर करती है, साथ में एक बड़ी तस्वीर की ओर भी इशारा करती है और वो तस्वीर यह है कि संसाधनों के अभाव और दुर्लभ न्याय प्रणाली की वजह से समाज के हाशिए के वर्गों को जेल की काली कोठरी में अक्सर सड़ना पड़ता है।

मीडिया की उदासीनता : दलितों और पिछड़ों के प्रति मीडिया की उदासीनता भी जग जाहिर है। हालिया दिनों में गुजरात के उना में चार दलित नौजवानों की सामूहिक पिटाई की गयी और उन्हें एक कार के पीछे बांधकर परेड कराया गया। यह घटना तो सबको याद होगी, लेकिन मुख्य धारा की मीडिया का ध्यान तब गया, जब सोशल मीडिया और देश के दलित संगठनों ने जमीनी स्तर पर विरोध शुरू किया। दलितों के प्रति मीडिया की इस उदासीनता को अरुंधती राय ने अम्बेडकर की किताब एनिहिलेशन ऑफ कास्ट (जाति का विध्वंस) की प्रस्तावना में उजागर किया है। उन्होंने लिखा है कि यदि आपने मलाला (यूसूफजई) का नाम सुना है, लेकिन सुरेखा भोतमांगे के बारे में नहीं जानते हैं, तो अम्बेडकर की यह किताब आपको जरूर पढ़नी चाहिए। दरअसल सुरेखा महाराष्ट्र के भंडारा जिले की एक पढ़ी-लिखी दलित महिला थी, जो अपने और अपने बच्चों के लिए सम्मानपूर्ण जीवन चाहती थी। यह बात उसके गांव के वर्चस्वशाली जाति के लोगों को पसंद नहीं आयी। उन्होंने सुरेखा और उसकी बेटी को नंगा कर गांव में परेड करवाया। उनके साथ सामूहिक बलात्कार किया और फिर उन दोनों के साथ बेटों की भी निर्मम हत्या कर दी। मीडिया ने इस नरसंहार को नैतिकता और सम्मान से जोड़ कर इस खबर को प्रसारित किया। मीडिया ने इस घिनौने कृत्य के लिए एक तरह से पीड़ितों को ही जिम्मेदार ठहरा दिया था। जब इस हिंसा को लेकर बड़े पैमाने पर विरोध-प्रदर्शन शुरू हुआ, तब जाकर पुलिस की नींद खुली। पुलिस ने इसे जातीय हिंसा मानने से भी इंकार कर दिया था। उसे

गांधी साहित्य सेट : मात्र पांच सौ रुपये में

सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी-221001 (उत्तर प्रदेश)

पुस्तक नाम	लेखक	पृष्ठ सं.	मूल्य
गांधी एक सामाजिक क्रांतिकारी	विलफ्रेड वेलॉक	60	20/-
गांधी एक राजनैतिक अध्ययन	जे. बी. कृपालानी	76	25/-
गांधीजी क्या चाहते थे?	निर्मल कुमार बसु	96	30/-
बापू की अंतिम झांकी	मनुबहन गांधी	268	120/-
बापू और स्त्री	सुजाता	116	50/-
गांधी की हत्या : सत्य का वध	रमेश ओझा	24	15/-
गांधी की हत्या : क्या सच क्या झूठ	चुनीभाई वैद्य	40	20/-
गांधी की शहादत	जगन फडणीश	160	50/-
गांधी और सुभाष	सुजाता	220	130/-
गांधी और अम्बेडकर	श्रीभगवान सिंह	120	85/-
गांधी और भगत सिंह	सुजाता	108	60/-
गांधी अर्थ-विचार	जे.सी. कुमारप्पा	64	30/-
गांधी की दृष्टि	दादा धर्माधिकारी	192	50/-

नोट : सेट भेजने का पोस्टेज एवं पैकिंग अतिरिक्त देय होगा। **–प्रकाशक**

घटना को दस साल से अधिक बीच चुका है। मलाला को जब गोली मारी गयी, तब उसे पूरी दुनिया के मीडिय ने कवर किया। कई देशों के राष्ट्राध्यक्षों ने उस घटना पर अपनी संवेदना व्यक्त की, बाद में मलाला को शांति का नोबल पुरस्कार भी मिला, लेकिन सुरेखा के मामले में न तो मीडिया ने वैसी दिलचस्पी दिखायी और न विभिन्न देशों के राष्ट्राध्यक्षों ने अपनी संवेदना ही व्यक्त की। यह घटना इसलिए भी महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि हाल में सुप्रीम कोर्ट ने अपने फैसले में अनुसूचित जाति/जनजाति कानून के सख्त प्रावधानों को नर्म करने का फैसला सुनाया है। पुलिस दलित प्रताड़ना के मामलों को अनुसूचित जाति/जनजाति कानून के तहत दर्ज करने में आनाकानी करती है, तो जब ये कानून ही कमजोर हो जायेगा, तो फिर दलितों को सुनने वाला कोई नहीं होगा।

बहरहाल, जैसा ऊपर जिक्र किया जा चुका है कि पिछले तीन वर्षों के एनसीआरबी के आंकड़ों में दलितों पर अत्याचार के मामले में किसी तरह का परिवर्तन देखने को नहीं मिला है। इन आंकड़ों के लिहाज से देखा जाये, तो देश में हर दूसरे घंटे किसी न किसी दलित को निशाना बनाया जाता है। हर 24 घंटे में तीन दलित महिलाओं के साथ बलात्कार होता है। हर घंटे कोई न कोई दलित मारा जाता है या उनके घर जलाये जाते हैं, लेकिन इन घटनाओं को मीडिया में कितनी कवरेज मिलती है, यह सबको मालूम है। दलित उत्पीड़न से संबंधित मामले मीडिया के संज्ञान में उस वक्त तक नहीं आते, जब तक देश के दलित संगठन सड़कों पर उतरकर विरोध-प्रदर्शन नहीं करते।

अमेरिका में जब दासता खत्म हुई तो अश्वेत लोगों के साथ अमेरिका की सड़कों पर हिंसा होने लगी। उन्हें पीटा जाने लगा, उनके ऊपर तरह-तरह के अत्याचार होने लगे। ठीक वैसे ही जब आज भारत में दलित समुदाय प्रतिकार कर रहा है, सवाल कर रहा है, आवाज उठा रहा है तो उनपर हमले हो रहे हैं। भीमा कोरेगांव की हिंसा इसका ताजा उदाहरण है। ❑

9 अगस्त : विश्व आदिवासी दिवस

दलित और आदिवासी की जीवन-गाथा

❑ **रामचन्द्र पासवान**

"जीवन में संघर्ष न हो तो,
जीवन का कुछ अर्थ नहीं है।
संघर्षों से जो घबराता है,
वह कभी समर्थ नहीं है।"

इतिहास साक्षी है कि इस पवित्र एवं धार्मिक देश भारत में हम दलित और आदिवासी पर अनादि काल से उच्च जाति कहलाने वाले लोग जुल्म का शितम ढाते आ रहे हैं, जबकि इस पवित्र भारत का मूलवासी हम दलित और आदिवासी भाई हैं और द्रविड़ के नाम से जाने जाते थे, परंतु आर्यों ने भारत में आकर छल-कपट की नीति अपनाकर द्रविड़ों को बंदी बना लिया और इस देश पर अपना प्रभुत्व जमा लिया। तब से हमलोगों को शूद्र घोषित कर तरह-तरह की यातनाएं देता आ रहा है। इन यातनाओं से बचने के लिए कुछ द्रविड़ों ने अपना शरण जंगलों में लिया, जिसे लोग आदिवासी कहने लगे। इस तरह दलित और आदिवासी पूर्व में दोनों द्रविड़ क्रांतिकारी के नाम से जाने जाते थे। आर्यों ने द्रविड़ों को दो भागों में बांट कर अपना राज कायम कर लिया।

इन पाखंडी आर्य संस्कृति का दूसरा नाम हिन्दू धर्म है। इस हिन्दू धर्म में अनुसूचित जाति/जनजाति के लिए कहीं भी जगह नहीं है। इन लोगों के लिए अलग नियम और कानून बना है। दलित और आदिवासियों के लिए जंगलों में रहना, जूठा सामान खाना, पीने के लिए पोखरा या तालाब का पानी, धार्मिक स्थान पर नहीं जाने देना, न ही शिक्षा प्राप्त करने देना यहां तक कि कुछ माने में पशु से भी बदतर जीवन जीने को मजबूर कर रखा था। विडंबना तो यह है कि जब ऊपर उठने का प्रयास करते हैं तो धर्म के रखवालों का विरोध करते हैं तो यह कहा जाता है कि वह गलत कर रहे हैं। वर्तमान समय में भी खेत से खलिहान तक, मकान से दुकान तक, सड़क से दफ्तर तक, गली से बथान तक, देवी स्थान तक दलित और आदिवासियों के साथ अन्याय ही अन्याय हो रहा है। दलित और आदिवासी सारे अन्याय को सह लेते हैं फिर भी कट्टरपंथियों को समझ में बात नहीं आती कि ये लोग भी मानव ही हैं।

दलित और आदिवासी समुदायों की प्रारंभिक पृष्ठभूमि जो भी हो, परंतु आज भी सबसे ज्यादा शोषित, पीड़ित और प्रताड़ित इसी समाज के लोग हैं। स्वामी दयानंद सरस्वती और स्वामी विवेकानंद जैसे आध्यात्मिक पुरुषों ने इन सब कुप्रथाओं के खिलाफ आवाज उठाये, परंतु जाति की गबड़बंदी इतनी मजबूत थी कि समाज से इन बुराइयों को दूर नहीं किया जा सका। स्वयं डॉ. भीमराव अम्बेडकर जैसे महान दलित नेता ने दलितों की पीड़ा को समझा-बूझा और मजबूती के साथ देश और सरकार के सामने रखा। देश-विदेश में इनकी चर्चा होने लगी।

हिन्दू समाज में प्रचलित अमानवीय व्यवहार के कारण बहुत सारे दलित और आदिवासी अपना धर्म परिवर्तन कर लिया फिर भी लोगों के ऊंच-नीच के इस भेदभाव से छुटकारा नहीं पा सके। यहां तक संविधान के अनुच्छेद 17 में छुआछूत को एक दंडनीय अपराध घोषित किया और उसको अमली जामा पहनाने के लिए नागरिक अधिकार रक्षा अधिनियम 1955 में बनाया गया। परंतु यह बिल्कुल शिथिल-सा पड़ चुका है। इस नियम को लोग ठंडे बस्ते में बांध कर रख दिया है। अनुसूचित जाति/जनजाति आयोग प्रतिवर्ष जो अपना आंकड़े प्रकाशित करता है, उस आंकड़े के मुताबिक दलित और आदिवासी पर अत्याचार की घटनाएं हर साल हो रही है। उड़ीसा के पिछले 5 साल के आंकड़े बताते हैं कि हर साल आदिवासी महिलाओं के बलात्कार के औसत 550 मामले प्रकाश में आते हैं, मध्य प्रदेश में भी दलित आदिवासी महिलाओं को गांव में निर्वस्त्र कर घुमाने की घटनाएं भी अखबारों की सुर्खियों में रहती है। इसका कुछ ज्वलंत उदाहरण इस प्रकार है। इलाहाबाद के दोना गांव की खतिया तथा समस्तीपुर जिले के आलू चुराने के आरोप में दलित महिला को नंगा कर गांव में घुमाया गया था।

आज भी देवदासी प्रथा व्याप्त है। वह देवी, देवी न हो तो दलित महिलाओं पर बर्बर बलात्कार बरपाती है। याद रहे कर्नाटक के एक छोटा कस्बा जो भारत की गोद में बसा

सुशोभित गांव चिनचानपुर, जहां पर देवी का एक मंदिर है, उस मंदिर का नाम है 'मापुर तकि देवी'। इस देवी मंदिर के बारे में कुछ अलग प्रचलन प्रचलित है। उस मंदिर में हर वर्ष अप्रैल माह के दूसरे शुक्रवार को वहां से करीब तीन किमी दूर पर स्थित अपने मंदिर के निजी कक्ष में समावेश हो जाती है और पांच सप्ताह वहीं रहती है। उसी पांचवें सप्ताह के अंतिम दिन शुक्रवार को मंदिर में एक भव्य मेला का आयोजन किया जाता है। जहां पर भक्तजन हर्षोल्लास के साथ गाते-बजाते अपने घर वापस लौट जाते हैं। लेकिन ये पांच सप्ताह वहां की खासकर दलित महिलाओं को काफी कष्टप्रद समय बिताना पड़ता है। इस अवधि में उन्हें योगिन के भेष में देवी की अर्चना और सेवा के लिए तैनात किया जाता है। यह सेवा देवी की नहीं वहां के पुरुषों की होती है। उस अवधि में दासी से भोग-विलास भी किया जाता है। इतना ही नहीं जब देवी लौटकर आती है तो महिलाओं को नग्न होकर मंदिर की परिक्रमा करनी है और वे जुलूस में नग्न शरीर पर चंदन का लेप करके शामिल होती हैं। इस कुप्रथा के पीछे मान्यता यही है कि जिस खानदान की दलित महिलाएं देवी की सेवा में शामिल हो जाती हैं उस खानदान के लोग अगले जनम में दलित होने से मुक्त हो जाते हैं। यह यातना गैर दलित महिलाओं के लिए नहीं है। यह कितनी विडंबना की बात है।

वर्तमान में देवदासी प्रथा की किस्में कुछ भिन्न है। पहले भूख और प्यास मिटाती थी और आज उसके घर में नौकरानी के रूप में। चंद पैसों के बल पर दलित महिलाओं को अपने घर की नौकरानी के रूप में रखकर उसको शारीरिक शोषण करते हैं, गर्भवती होने पर उसे जान से मारकर फेंक देते हैं। ऐसे ही लोग आज समाज के उत्थान की बात करते हैं और सारे बोझ को अपने सर पर लेकर घूमते रहते हैं।

डॉ. जोन ऑबेइस ने देवदासी प्रथा के आंदोलनकारियों से साक्षात कर अपने सर्वेक्षण के बाद लिखता है कि बंगलौर, बेलगांव, वीणापुर और कलिहापुर में अभी भी देवदासी प्रथा प्रचलित है। उन्हीं के शब्दों में— देवदासियां मुख्य रूप से दलित वर्ग से आती हैं सच्चाई की कहानी इस प्रकार है। प्राचीनकाल में जिन लड़कियों का जटा केश में शिखा आती है उन्हें देवी को समर्पित कर दिया जाता है और उसे दुनियादारी यहां तक कि शादी-विवाह से भी वंचित कर दिया जाता था। जब वह युवा हो जाती थी तो उससे मंदिरों में नृत्य करवाया जाता था। देवी-देवताओं की सेवा करनी पड़ती थी उन्हें धार्मिक उत्सवों व अनुष्ठानों में भाग लेनी पड़ती थी, उसे देवता का विवाहिता माना जाता था और मंदिर में आने वाले किसी भी उच्च जाति (सवर्ण) के धनी व शक्तिशाली पुरुष देवदासी के साथ यौन संबंध के लिए राजी करवाता था। बदले में देवदासी के माता-पिता को कुछ पैसा देकर प्रलोभन में फंसा दिया जाता था और उस भोलीभाली देवदासी के साथ यौन-शोषण सवर्ण जाति के लोग किया करते थे। उसे विधिवत देवदासी का मुखौटा पहनाकर दलित महिला को वेश्या जैसा व्यवहार किया जाता था। परंतु दुःख इस बात की है कि अगर जटा के सुवर्ण जाति की लड़कियों को होने पर मंदिर में देवदासी तो बनाया जाता था परंतु उसके साथ कुछ विधि-विधान और भी वह केवल देवदासी के रूप में देवी-देवताओं के पूजा-पाठ तक ही सीमित थी। उसके साथ भोग-विलास नहीं करते थे चूंकि वह तो सवर्ण जाति की महिला थी। उन्होंने आगे लिखा है, सर्वेक्षण से पता चला है कि अधिकांश देवदासी वेश्याओं में ९० प्रतिशत लड़कियां पिछड़ी जाति व दलित वर्ग की थी और आज भी घरों में काम करने वाली महिला उसी वर्ग की होती हैं।

इस कुप्रथा को जड़ से मिटाने में भारतरत्न बाबा साहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर का अग्रणी योगदान रहा है। उन्होंने आवाहन किया था कि दलितों की महिलाओं पर हो रहे अत्याचार का जमकर विरोध करें और उसी के नतीजतन महाराष्ट्र में महार जाति में यह प्रथा लगभग खत्म हो चुकी है, जबकि पूर्व में यह प्रथा मुरली प्रथा के नाम से प्रचलित था। उसी कुप्रथा के चपेट में आकर हजारों दलित लड़कियां अपने सारे अरमानों की आहुति दे दी।

आदिवासी सारे देश में जिस प्रकार विकास के नाम पर अपने पुस्तैनी इलाकों से उजाड़े जा रहे हैं उसके कारण वे अपने ही देश में बेगाने जैसे हो रहे हैं। जिन जंगलों-पहाड़ों वन क्षेत्रों की रखवाली युग-युग से आदिवासी और दलितों ने की, आज वे उन्हीं जंगलों में प्रवेश नहीं कर सकते, जंगलों की उपज पर आज उनका कोई अधिकार नहीं है, परिणामस्वरूप आदिवासी और दलित रोजी-रोटी की तलाश में दूसरे प्रदेशों में ईंटा-भट्ठा में मजदूरी करने के लिए मजबूर हैं। लोगों ने इन आदिवासी दलितों का न केवल आर्थिक शोषण किया है, बल्कि उनकी महिलाओं के साथ आर्थिक और दैहिक दोनों शोषण किया जाता रहा है। इसी का परिणाम है कि आज आंध्र के तेलंगाना बारंगल से लेकर उत्तर-पूरब के शबर संथाल मुंडा, कोटाला, भूमिज, कोल, भील सभी में असंतोष का ज्वालामुखी धधक रही है।

अंग्रेजी हुकूमत में बिरसा मुंडा के नेतृत्व में हुए विद्रोह से लेकर आज तक आदिवासियों और दलितों के संघर्ष का एक लंबा इतिहास है। अगर समय रहते दलित और आदिवासियों के समस्या का समाधान न किया तो देश के दलित और आदिवासी में असंतोष का ऐसा ज्वालामुखी भड़केगा जिसे बुझाना मुश्किल होगा।

आजादी के पश्चात दलितों और आदिवासियों में आत्मसम्मान का भाव जागृत हुआ। शिक्षा का बंद द्वार इनलोगों के लिए खुल जाने से नयी पीढ़ियां विश्वविद्यालयों तक पहुंचने लगी, जाति व्यवस्था को जो धर्मकट्टर लोग ईश्वरकृत मानते थे, वे भी समझने लगे कि ऊंच-नीच की यह कुव्यवस्था आदमी की ही देन है। आज का पढ़ा-लिखा दलित और आदिवासी अपने अधिकारों के लिए तनकर खड़ा हो रहा है। यही बड़ी अफसोस की बात है कि समाज में आज भी एक ऐसा सामंतशाही प्रवृत्ति के लोग हैं जो आर्थिक हितों के कारण दलित और आदिवासी के इस प्रकार विकास करते देखना पसंद नहीं करते हैं। परिणामस्वरूप कन्याकुमारी से दिल्ली के संसद भवन के गलियारों में हिंसात्मक रूप ग्रहण कर लिया है। स्वार्थी तत्त्वों के द्वारा आज भी आदिवासी और दलितों के साथ दोहरी नीति अपनायी जाती है। वर्षों से आ रहा दलित और आदिवासी को नौकरी में आरक्षण पदोन्नति एवं अन्य विकास से संबंधित सरकारी नियमों में संशोधन कर कटौती की जा रही है।

प्राचीन से आज तक हमारे देश में जितने भी धार्मिक सुधारक, समाज सुधारक व शिक्षाविद् तथा नेता जन्म लिए सबों के माथे पर लगा कलंक आदिवासी और दलितों के सामाजिक शैक्षणिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक उपेक्षा का पूर्णरुपेण नहीं मिटा सकें।

डॉ. अम्बेडकर के विचारों को एक बार पुनः दोहराना चाहता हूं कि हर दलित और आदिवासी अपने-अपने बच्चों को शिक्षा, संगठन और संघर्ष की राह पर लाकर खड़ा कर दें ताकि आगे बढ़कर अपना दीपक आप बनकर, सक्रिय शैक्षणिक, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक सूत्रधार बन सकें। 'अगर गुलाम को गुलामी का एहसास करा दो तो गुलामी की जंजीर स्वयं तोड़ देगा।' ❑

बा-बापू : 150वीं जयंती पर विशेष

'बा'
जुलू विद्रोह और कस्तूरबा

❑ गिरिराज किशोर

गांधीजी को लेकर एक बड़ा और चर्चित उपन्यास प्रस्तुत कर चुके श्री गिरिराज किशोर ने अब बा पर कलम उठायी है। बा पर कुछ भी लिखना बहुत कठिन था। नहीं के बराबर जानकारियां। 'पहला गिरमिटिया' की सामग्री जुटाने में उन्हें कोई दो हजार पुस्तकों से मदद मिली थी। और 'बा' उपन्यास लिखते समय मुश्किल से दो पुस्तकें सामने थीं। वे उन सब लोगों से मिले, जिन्हें कस्तूरबा के बारे में थोड़ी-सी भी जानकारी थी और उन जगहों पर गये, जहां बा ने थोड़ा या बहुत समय बिताया था। इस तरह बनी यह कथा, यह इतिहास बा के अलावा खुद बापू के दो और रूपों को भी सामने रखता है–पति और पिता का रूप। प्रस्तुत है 'बा' का एक अंश, जो बा-बापू : 150 के अवसर पर क्रमशः प्रकाशित हो रहे हैं। –सं.

कस्तूरबा के ऑपरेशन के बाद से ही सत्याग्रहियों की गिरफ्तारी और सजा का क्रम जारी हो गया था। कस्तूरबा को अपने पति और बड़े बेटे का समाचार बारह महीने के अंदर आठ बार मिला था। पांच सालों में, जब सत्याग्रह अपने चरम पर था, कस्तूर के परिवार के सदस्य अठारह बार जेल जा चुके थे। कई बार तो ऐसा संयोग हुआ कि बाप बेटे एक ही जेल में पहुंच गये। 25 फरवरी, 1909 को ट्रांसवाल पहुंचते ही, मोहनदास तीसरी बार गिरफ्तार किये गये थे। तीन महीने की सजा हुई थी। उन्हें बोलक्सर्ट जेल भेजा गया जहां हरिलाल छह महीने की सजा पहले

से काट रहा था। लेकिन बाप-बेटे बहुत समय तक साथ नहीं रह सके। सरकार ने तय किया कि मोहनदास को कसना है। उन्हें प्रिटोरिया स्थानांतर कर दिया गया। उस जेल की हालत बदतर थी। वे कभी ऐसी जेल में नहीं थे।

मोहनदास को जेल से महीने में एक पत्र भेजने और एक पत्र पाने का अधिकार था। उस पत्र में जेल में गुजर रहे जीवन के बारे में कुछ भी लिखने की अनुमति नहीं थी। मणिलाल भी सोलह साल का हो गया था। मोहनदास के सामने कई विकल्प थे जिन्हें पत्र में लिखा जा सकता था। उन्होंने मणिलाल को पत्र लिखने का निश्चय किया। उन्हें कस्तूरबा, दोनों बेटों रामदास और देवदास की चिन्ता थी। उन्होंने पत्र में लिखा, 'मैं जानता हूं कि तुम्हें लगता है कि तुम्हारी शिक्षा की उपेक्षा की जा रही है।...मैंने जेल में इस बारे में काफी पढ़ा है। मेरे इस विचार की पुष्टि हुई है कि शिक्षा शब्दों की जानकारी ही नहीं है। उसका अर्थ है—चरित्र-निर्माण, कर्तव्य का ज्ञान...इससे बेहतर और क्या हो सकता है कि तुम्हें बा की सेवा और भाभी गुलाब की देखभाल करने का अवसर मिला है। खयाल रखना कि गुलाब को हरिलाल की अनुपस्थिति महसूस न हो। रामदास और देवदास के संरक्षक भी तुम ही हो।'

मोहनदास प्रिटोरिया जेल से छूटने के बाद कुछ ही दिन फीनिक्स में रह पाये थे। उन्हें उस जेल में रहने के बाद अतिरिक्त ऊर्जा और शक्ति की आवश्यकता थी। लेकिन उन्हें हाजी हबीब के साथ लंदन भेज दिया गया था। कस्तूरबा ठीक तो हो गयी थी पर कमजोरी बहुत थी। फिर भी वह घर की देखभाल पूरी जिम्मेदारी से करती थी। सत्याग्रह हल्का पड़ रहा था। प्रवासी भारतीय दंडात्मक कार्यवाही और अपने आर्थिक दबावों के कारण भटक गये थे। उन लोगों के बीच आपसी मतभेद भी उभरने लगे थे। दुश्मनों को मिलकर आक्रमण करने का मौका मिल गया था। नेटाल, ट्रांसवाल और औरेंज फ्रीस्टेट की सरकारें आपस में मिलकर यूनियन बनाने की जुस्तजू में थीं। सरकारी प्रतिनिधि प्रधानमंत्री बोथा और जनरल स्मट्स उस प्रस्ताव को अंतिम रूप देने के चक्कर में थे। दक्षिण अफ्रीका का भारतीय समुदाय उनके सामने बहुत छोटा था। ट्रांसवाल में वे संकट में थे और औरेंज फ्रीस्टेट में उन्हें बहिष्कृत किया जा चुका था। इन राज्यों के बीच मेल-मिलाप हो जाने के कारण भारतीय समुदाय का खतरा बढ़ गया था। नये राज्यों में भारतीय समुदाय विरोधी कानून बहुत दमनकारी बनने वाले थे। इसीलिए भारतीय समुदाय ने ब्रिटिश सरकार और जनप्रतिनिधियों के सामने अपना पक्ष रखने के लिए दो प्रतिनिधियों को लंदन भेजने का निर्णय लिया था। उनके सामने दो सदस्यीय प्रतिनिधि मंडल का नेता मोहनदास को बनाने के सिवाय कोई विकल्प नहीं था। कस्तूरबा जानती थी कि अपने स्वास्थ्य की ऐसी हालत में बच्चों के साथ अकेले रहना कठिन होगा। पति आसपास कहीं भी रहे पर उसका साया परिवार पर बना रहता है। मोहनदास के लंदन जाने के बारे में न कस्तूरबा कुछ कह सकती थी और न मोहनदास...इतने देशवासियों का हित उनके लंदन जाने से जुड़ा था।

23 जून को मोहनदास और हाजी हबीब वहां से चलकर 10 जुलाई को लंदन पहुंचे थे।

मणिलाल भी अपने बड़े भाई की तरह, जोहान्सबर्ग जाकर और सत्याग्रह करके, जेल जाना चाहता था। लेकिन बा-बापू दोनों इस पक्ष में नहीं थे। मोहनदास ने मणिलाल को फीनिक्स जैसे ग्रामीण अंचल की जोहान्सबर्ग के वातावरण से तुलना करते हुए लिखा था,

'वहां रहते हुए इन्सान अपनी आत्मा और सत्य को बिना जोहान्सबर्ग के नगरीय वातावरण की उठा-पटक में पड़े, खोज सकता है। वहां उसे विकसित होने का कम अवसर मिलता है, वहां तरह-तरह के आकर्षण हैं। उनके बीच ईमानदारी और सत्यनिष्ठा बनाये रखना मुश्किल है।'

लंदन से मोहनदास और हाजी हबीब खाली हाथ लौटे थे। दोनों जनरल्स बोथा और स्मट्स पहले ही पहुंच चुके थे, ब्रिटिश सरकार को प्रभावित करने में वे सफल हो गये। दक्षिण अफ्रीका सरकार छूट देने के लिए तैयार नहीं हुई और ब्रिटिश सरकार भारतीयों की तरफ से कुछ भी बोलने के लिए तैयार नहीं थी। जब अक्टूबर में 'यूनियन ऑफ साउथ अफ्रीका एक्ट' बना तो उसमें साउथ अफ्रीकन भारतीयों के अधिकारों को कोई सुरक्षा नहीं दी गयी थी। मोहनदास पर इस असफलता का गहरा प्रभाव पड़ा। उन्होंने लौटते हुए जहाज में ही संक्षिप्त पर एक महान ग्रंथ लिखा जो ब्रिटिश सरकार के जनतंत्र की कमियों को उजागर करने के साथ दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों की पीड़ा के माध्यम से समस्त भारतीयों की दासता के दर्द का दिग्दर्शन कराता है। उसमें उस समय के सब गुलाम देशों के दर्द का प्रतिबिम्ब है। उस ग्रन्थ का नाम 'हिन्द स्वराज' है। उसे बाइबिल के बाद दूसरा ग्रंथ कहा गया है। उसमें भारतीयों की ही नहीं, तीसरी दुनिया के सभी लोगों को पाश्चात्य शैतानी सभ्यता से बचने के लिए चेताया है। उसे लिखते हुए उनके दिमाग में एक सवाल था कि क्या ये गोरे इन्सानियत से पूरी तरह महरूम हैं? जिन भारतीय मजदूरों को अपने देश में लाने के लिए इतने बेचैन थे कि 1851 में दक्षिण अफ्रीका के गोरे खेतीहरों ने प्रस्ताव पास किया था 'अश्वेत (भारतीय) मजदूरों को लाने के लिए एक कंपनी की स्थापना की जाये। जब तक हम इस दिशा में कार्यवाही नहीं करेंगे कपास, गन्ना आदि शीतोष्ण फसलें पैदा नहीं हो सकेंगी (पहला गिरमिटिया, प्र. 22 ले. गिरिराज किशोर)।' उन्हीं मजदूरों को, जिन्होंने अपने देश से लाए बीजों से शीतोष्ण फसलें पैदा करना सिखाया, उनके घर और देश से निकाल देने को आतुर थे। वे उनके इस व्यवहार को पाश्चात्य सभ्यता की संकीर्णता और अमानवीयता से जोड़कर देख रहे थे। वे उस ग्रंथ को लिखते हुए 'हिन्द स्वराज' के एक-एक शब्द में ऊर्जा भर रहे थे। उनके सामने अपने देश के गांव और दक्षिण अफ्रीका के घेटोज और स्वटोज आकर खड़े हो जाते थे। वे चाहते थे कि हमारे गांव पाश्चात्य नगरों की तरह परावलंबी न बनकर स्वावलंबी बनें। पाश्चात्य सभ्यता का आधार लोभ, भौतिकवाद, संसाधन संग्रह और अनियंत्रित इन्द्रिय सुख है। जब उनसे पूछा गया कि वे पाश्चात्य सभ्यता के बारे में क्या सोचते हैं। उनका जवाब था 'एक अच्छा विचार है'। लेकिन जब अपने देश की बात आयी तो उन्होंने कहा कि भारत अपनी मूल आत्मा प्राचीन सहिष्णु ग्रामीण जीवन में ही पा सकता है। उसकी झलकी रामदास को लिखे पत्र में मिलती है : 'तुम नाराज मत होना, मैं तुम्हारे लिए कुछ नहीं लाया। उन्होंने इस कथन का स्पष्टीकरण दिया कि वहां मुझे कुछ पसंद नहीं आया। यूरोपियन उपहार मुझे नहीं भाते, भारत में बनी चीजें अच्छी लगती हैं। उनके जीवन जीने का तरीका मुझे पसंद नहीं।'

...क्रमशः अगले अंक में

हताश मानसिकता का द्योतक है स्वामी अग्निवेश पर हमला

बंधुआ मुक्त मोर्चा के संस्थापक और पूर्व राज्यसभा सदस्य स्वामी अग्निवेश के साथ 17 जुलाई 18 को पाकुड़ के लिट्टीपारा (झारखंड) में भाजयुमो एवं एबीवीपी कार्यकर्ताओं ने जो अभद्रता की, वह उनकी हताश मानसिकता को परिलक्षित करता है। इस हेतु इन संगठनों की जितनी भी निन्दा की जाये वह कम है। सीएम रघुवरदास द्वारा घटना की जांच कराये जाने के आदेश दिये गये हैं, जो न्याय व लोकतंत्रीय व्यवस्था का हिस्सा है। परंतु ऐसे लोगों को जांचोपरांत सजा भी दी जानी चाहिए।

स्वामी जी हमेशा मानवता, राष्ट्रीयता और सनातन धर्म का प्रचार-प्रसार करते रहते हैं। उन्होंने बंधुआ मजदूरों को गुलामी से मुक्त कराये जाने हेतु अपना सारा जीवन समर्पित कर दिया है, जिसके सकारात्मक परिणाम समाज के सामने है।

सर्व सेवा संघ की इकाई उत्तर प्रदेश सर्वोदय मंडल के पूर्व सचिव लक्ष्मण सिंह एडवोकेट ने स्थानीय स्तर पर आपात बैठक आहूत कर उच्च स्तरीय निष्पक्ष न्यायिक जांच कराने और दोषियों को सजा दिये जाने की मांग का ज्ञापन जिलाधिकारी फर्रुखाबाद के माध्यम से महामहिम राष्ट्रपति एवं प्रधानमंत्री, भारत सरकार, नई दिल्ली को दिया।

–लक्ष्मण सिंह एडवोकेट

कार्यकारिणी की बैठक

सर्व सेवा संघ (अ. भा. सर्वोदय मंडल) कार्यकारिणी की बैठक 18-19 जुलाई 2018 को संघ अध्यक्ष श्री महादेव विद्रोही की अध्यक्षता में गांधी मंडप, मदुरई (तमिलनाडु) में सम्पन्न हुई।

बैठक के प्रथम दिन सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष ने तमिलनाडु राज्य द्वारा सर्वोदय आंदोलन में किये गये योगदान की विस्तृत चर्चा की। उन्होंने स्पष्ट किया कि भूदान में भी तमिलनाडु का बड़ा योगदान रहा है। एक समय सर्व सेवा संघ प्रकाशन विभाग की एक शाखा तमिलनाडु राज्य में संचालित थी। बैठक में उपस्थित सभी सदस्यों ने एक स्वर में एक दिन पहले स्वामी अग्निवेशन पर हुए हमले की भर्त्सना की।

बैठक में प्रमुख रूप से डॉ. एस. एन. सुब्बराव, पी. राजगोपाल उपस्थित रहे। सभी सदस्यों ने गांधी मंडप परिसर अवस्थित गांधी समाधि स्थल पर सामूहिक प्रार्थना की तथा अस्थि-स्थल पर पुष्पांजलि दी।

बैठक में कई महत्त्वपूर्ण निर्णय लिये गये। 19 जुलाई 2018 को बैठक सम्पन्न होने के पश्चात् स्वामी अग्निवेश पर हुए हमले को लेकर प्रेस कान्फ्रेंस आयोजित किया गया, जिसमें कई लोगों ने हमले की भर्त्सना करते हुए अपने विचार रखे।

–स. ज. प्रतिनिधि

गतिविधियां एवं समाचार

स्वामी अग्निवेश पर हुए हमले पर सर्व सेवा संघ का वक्तव्य

सर्व सेवा संघ (अ. भा. सर्वोदय मंडल) की कार्यसमिति ने 19 जुलाई 2018 को स्वामी अग्निवेश पर हुए हमले की भर्त्सना करते हुए दोषियों के विरुद्ध सख्त कार्रवाई करने की मांग की है।

ज्ञातव्य हो कि सर्व सेवा संघ गांधीजनों की शीर्षस्थ संस्था है, जिसकी स्थापना 1948 में महात्मा गांधी के निर्देश में आचार्य विनोबा भावे, पं. जवाहरलाल नेहरू, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, जयप्रकाश नारायण, जे. सी. कुमारप्पा की उपस्थिति में हुई थी।

17 जुलाई 2018 को स्वामी अग्निवेश एक कार्यक्रम में भाग लेने झारखंड गये थे। ज्यों ही वे अपने होटल से बाहर निकले, युवा मोर्चा और अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद के लोगों ने 80 वर्षीय स्वामी अग्निवेश पर हमला कर दिया। यह एक खतरनाक अपराध है, जिसकी हर स्तर पर भर्त्सना होनी चाहिए। इस हमले के बाद बीजेपी के प्रवक्ता ने स्वामी अग्निवेश को खराब व्यक्तित्व की संज्ञा दी, जिससे हमला करने वालों का मनोबल बढ़ा।

जैसा कि विदित है स्वामी अग्निवेश आर्य समाजी हैं, जो मूर्ति पूजा और इस तरह के किसी कर्मकांड में विश्वास नहीं करते, जैसा सनातन धर्म में किया जाता है। इसलिए धार्मिक संवर्धन कार्यों में स्वामी का भाग लेने तथा इससे सामाजिक चेतना जगाने के काम को संकीर्ण रूप से नहीं देखा जा सकता। स्वामी जी से किसी भी व्यक्ति को मतभेद हो सकता है और यह शक्ति आवाम के हर लोगों के पास है। लेकिन किसी के विचार को दबाने के लिए हमला किया जाना, संविधान पर हमला है। लगता है विपरीत विचारों को दबाने के लिए कुछ लोग इस तरह के हमले करने के लिए प्रशिक्षित किये गये हैं। भीड़ द्वारा हुए ऐसे हमले को इन तत्त्वों द्वारा सुनियोजित ढंग से किया गया हमला, बल्कि इस तरह के समूह द्वारा शारीरिक आक्रमण और हत्या को संविधान पर आक्रमण और कानून व्यवस्था का उल्लंघन मानना चाहिए। लोगों को राष्ट्रद्रोही कहकर सीधे समूह द्वारा आक्रमण या हमला किया जाना खतरनाक है। इसलिए सत्ताधारी दल द्वारा दोषियों को संरक्षण दिये जाने के विरुद्ध कानूनी कार्रवाई जरूरी है। कुछ प्रतिबद्ध लोग जो लोकसेवा में लगे हुए हैं उनके साथ भी किसी के द्वारा कानून से ऊपर व्यवहार करना भर्त्सना के योग्य है।

सर्व सेवा संघ सभी आमजनों तथा लोकतंत्र में विश्वास करने वाले लोगों से अपील करता है कि इस तरह की घटनाओं की वे भर्त्सना करें, जो आजकल पूरे देश में कहीं भी घट रही हैं और जिससे लोकतांत्रिक समाज का तानाबाना छिन्न-भिन्न हो रहा है।

17 जुलाई 2018 को जिस दिन सर्वोच्च न्यायालय ने संसद को 'प्रभावकारी कानून' बनाने का निर्देश दिया, जिससे सामूहिक हमले रोके जा सकें, इसके बावजूद इस तरह की घटना का घटित होना, सत्ताधारी दल द्वारा माननीय सर्वोच्च न्यायालय के सामने चुनौती पेश करने जैसा है।

–महादेव विद्रोही

कश्मीर में शांति एवं लोकतंत्र की स्थापना
राष्ट्रीय संगोष्ठी

कश्मीर की चिन्ताजनक परिस्थिति से आप अवगत होंगे ही। सर्वोदय आंदोलन इससे चिन्तित है। लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने आज से दशकों पहले इस समस्या के समाधान हेतु पहल की थी, पर उन्हें पाकिस्तानी एजेण्ट एवं देशद्रोही कहा गया। आचार्य विनोबा ने 1959 में 4 महीने तक कश्मीर की यात्रा एवं 80 सभाएं की। उन्हें कश्मीर में आशा की किरण दिखी। उन्होंने कहा था–*''मजहब एवं सियासत के दिन लद गये, आये हैं दिन साइंस एवं रुहानियत के।''*

हम मानते हैं कि नागरिकों की जिम्मेवार पहल से इस समस्या का समाधान हो सकता है। इसी दृष्टि से यह राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित की गयी है।

इस संगोष्ठी में वरिष्ठ गांधीवादी विचारक डॉ. रामजी सिंह, कुलदीप नैयर (वरिष्ठ पत्रकार एवं अध्यक्ष, सिटीजन्स फॉर डेमोक्रेसी), संतोष भारतीय (संपादक, चौथी दुनिया), अभय दूबे (सीएसडीएस), श्री एस. पी. वर्मा (गांधी ग्लोबल फैमिली), मेजर जनरल तेज कौल, अराफा खानम (वायर), सुहासिनी हैदर (द हिन्दू), बशीर असद, संजय नाहर-पुणे (सरहद), संजय टिक्कू (कश्मीरी पंडित संघर्ष समिति), सईदा हमीद (भू.पू. सदस्य योजना आयोग), राममनोहर राय (नित्यनूतन ब्रॉडकास्ट), रवि नितेश (आगाज-ए-दोस्ती) आदि हमारा मार्गदर्शन करेंगे। इसके अतिरिक्त संगोष्ठी में गांधीवादी कार्यकर्ता, जम्मू-कश्मीर सहित पूरे देश के निर्दलीय सामाजिक संगठन, वरिष्ठ पत्रकार एवं निष्पक्ष नागरिक भाग लेंगे।

इस विषय एवं संगोष्ठी में रुचि रखने वाले साथी सर्व सेवा संघ प्रधान कार्यालय से संपर्क करें।

तारीख : 25 अगस्त 2018 (शनिवार) : सुबह 10.30 से शाम 5.00 बजे तक

स्थान : *गांधी शांति प्रतिष्ठान, दीनदयाल उपाध्याय मार्ग, नई दिल्ली-110002 (आई.टी.ओ. मेट्रो स्टेशन, गेट नं. 1 एवं तिलक ब्रिज रेलवे स्टेशन के पास)*

महादेव विद्रोही
अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ

टी. आर. एन. प्रभु
अध्यक्ष, सेवाग्राम आश्रम प्रतिष्ठान

शेख हुसैन
महामंत्री, सर्व सेवा संघ

संपर्क : *मो. 9428825908, E-mail : president.sarvasevasangh@gmail.com/सर्व सेवा संघ, प्रधान कार्यालय, सेवाग्राम-441001, वर्धा (महा.) 07152-284061/284091, E-mail : sarvasevasangha@hotmail.com*

कविताएं

गांव छोड़ब नहीं

❑ भगवान मांझी

गांव छोड़ब नहीं
जंगल छोड़ब नहीं
माय माटी छोड़ब नहीं
लड़ाई छोड़ब नहीं

बांध बनाये, गांव डुबोये
कारखाना बनाये
जंगल काटे, खदान कोड़े
सेंचुरी बनाये...
जल-जंगल छोड़ी हमीन अब
कहां कहां जायें
विकास के भगवान बता
हम कैसे जान बचायें
गांव छोड़ब नहीं...
जंगल छोड़ब नहीं...

जमना सूखी, नर्मदा सूखी
सूखी सुवर्ण रेखा
गंगा बनी गंदी नाली
कृष्णा काली रेखा
तुम पियो पेप्सी कोला
बिसलरी का पानी
हम कैसे प्यास अपना बुझायें
पीकर गंदा पानी
गांव छोड़ब नहीं...
जंगल छोड़ब नहीं...

पुरखे थे वो मूरख, जो वे
जंगल को बचाये
धरती रखी हरी-भरी
नदी मधु बहाये
तेरी हवस में, लूट गयी धरती
लूट गयी हरियाली
मछली मर गयी, पंक्षी उड़ गये
जाने किस दिशाएं
गांव छोड़ब नहीं...
जंगल छोड़ब नहीं...

मंत्री बने कम्पनी के दलाल
हमसे जमीन छीने
उनको बचाने लेकर आये
साथ में पलटने
अफसर बने हैं राजा,
ठीकेदार बने धनी।
गांव हमारी बन गयी है
उनकी कॉलोनी।

गांव छोड़ब नहीं...
जंगल छोड़ब नहीं...

बिरसा पुकारे, एकजुट हो
छोड़ो ये खामोशी
मछुआरे आओ, दलित आओ
आओ आदिवासी
खेत-खलिहान से आओ
नगाड़ा बजाओ
लड़ाई छेड़े चारा नहीं
सुनो देशवासी
गांव छोड़ब नहीं...
जंगल छोड़ब नहीं...
माय माटी छोड़ब नहीं...
लड़ाई छोड़ब नहीं... ❑

सचमुच तुम खतरे में हो

❑ लीमा तूटी

तुम खेतों में मग्न हो
अपने हल बैलों के साथ...
तैयारी कर रहे हो किसी फसल की
या
कांधे पर बहंगी उठाये
झूमते आ रहे हो
किसी बूध या शनिचर बाजार से
या
तुम लौट रहे हो अपने साथियों के साथ
किसी उत्सव या आयोजन से
या फिर
जंगल में, मवेशी चराते हुए...
गुनगुना रहो हो...कोई प्रेम गीत
या
हो सकता है
बड़ी तेजी से भाग रहे हो
पड़ोस के गांव की तरफ
जहां...कोई हॉकी या फुटबॉल का
मैच चल रहा होगा...
फिर अचानक! यूं होगा है कि,
तुम्हें जबरदस्ती उठा लिया जाता है
या वहीं तुम्हारी देह
छलनी कर दी जाती
और साबित कर दिया जाता है
कि...'नक्सल थे तुम'
हे सबसे बड़े लोकतंत्र के
सबसे पुराने वासी
क्या तुम्हें नहीं लगता?
तुम्हारा आदिवासी होना
काफी है...ये दिखाने के लिए
...कि तुम खतरनाक हो?
या फिर
...तुम्हें नहीं लगा कभी कि,
सचमुच
तुम खतरे में हो। ❑

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा महावीर प्रेस, भेलूपुर, वाराणसी से मुद्रित। संपादक : अशोक मोती।